## नव वर्ष

सर्वप्रथम् अपने इष्टदेव श्री परमहँस महान विभुतियों के और श्री हुज़ूर सतगुरु दाता दयाल जी के पावन श्री चरण कमलों में सभी गुरुमुखों की तरफ से आज के शुभ दिवस नव वर्ष सन् 2004 की कोटिनकोटि मुबारकबाद अर्ज़ करता हूँ। सभी गुरुमुखों को भी इस नव वर्ष की बारम्बार बधाई और मुबारकबाद हो।

यह नववर्ष सभी के लिये कल्याणकारी मंगलमयी हो। सभी के जीवन में खुशीऔर आनन्द के फूल खिलें। अपने मालिक सतगुरु के श्री चरणकमलों में सबका दिन प्रतिदिन प्रेम बढ़े और अपने जीवन के लक्ष्य, सतगुरु की प्रसन्नता को प्राप्त करने में सफल हों। यही हार्दिक शुभ कामना है। श्री हुज़ूर के पावन वचन हैं :-

गया पुराना साल आई नये साल की बारी।
सबके मन में लालसा सुख मिलेगा भारी।
सुख मिलने का एक तरीका सन्त राज़ बतलाते हैं।
जो नाम भक्ति की कमाई करते सच्चे सुख को पाते हैं।।

प्रति वर्ष 31दिसम्बर को रात के बारह बजते ही पुराना साल विदा हो जाता है। उसकी जगह नव वर्ष पदार्पण करता है नव वर्ष के प्रथम दिन सूर्य की प्रथम किरण के उदय होते ही संसार में सभी व्यक्ति अपने हृदय में खुशी व प्रसन्नता का अनुभव करते हुये अपने हृदय में नई उमंगें,नई तरंगें,नया उल्हास और नया उत्साह धारण किये हुए एक दूसरे को नव वर्ष मुबारिक देने लगते हैं।सभी एक दूसरे के लिये शुभ कामनाएँ करते हैं कि उनका ये नव वर्ष खुशी और प्रसन्नता से बीते और सभी अपनी



मंज़िल की तरफ बढ़ते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हों।

जीवन को सुखी एवम् सफल बनाने की इच्छा, कुछ बन जाने की चाह,कुछ पा जाने की ख्वाहिश संसार में प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में हुआ करती है। चाहे वह आम संसारी मनमुख जीव है या गुरुमुख है।नव वर्ष के पदार्पण करते ही सभी अपनेअपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये नई नई योजनाएं बनाकर नये उत्साह और उल्हास के साथ प्रयत्नशील हो जाते हैं। दोनों में अन्तर केवल इतना ही है कि जहां मनमुख जीव अपने मन की प्रसन्नता के लिये संसार के सुख ऐश्वर्य को प्राप्त करने का यत्न करता है, वहाँ दूसरी ओर गुरुमुख अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये मालिक की भक्ति करके अपने इष्टदेव सतगुरु को प्रसन्न करने का यत्न करता है। नव वर्ष के पदार्पण करते ही नई नई योजनाएं बनाता है कि किस प्रकारअपने इष्टदेव की प्रसन्नता को प्राप्त किया जाये। सतगुरु की भक्ति और प्रसन्नता को प्राप्त करने में पिछले वर्ष जिन कारणों से, जिस जिस कार्य से,जो जो बाधाएं आईं, त्रुटियाँ हुईं,या असफलताएं हाथ लगीं उन बाधाओं और त्रुटियों को दूर करने का यत्न करता है। जो कर्म सतगुरु की श्री मौज़ के प्रतिकूल है, जो उन्हें नहीं भाते हैं,जिन कर्मों के करने से असफलता प्राप्त हुई उन्हें नव वर्ष में न करने का दृढ़ संकल्प करता है और जो कर्म सतगुरु की मौज़ केअनुकूल हैं जो उन्हें भाते हैं उन्हीं कर्मों में नव वर्ष का एक एक पल एक एक क्षण लगाने का दृढ़ संकल्प करता है। अपने जीवन के एक एक स्वाँस को सतगुरु की श्री आज्ञा मौज अनुसार उनकी सेवा में,नाम सुमिरण में,ध्यान में, सत्संग में, पूजा में लगा करकेअपने जीवन के सर्वोत्तम लक्ष्य,सतगुरु की प्रसन्नता

को प्राप्त करने के लिये नये उत्साह और नये उल्हास से प्रयत्नशील हो जाता है।

इस नये वर्ष में हम सब श्री सतगुरु देव दाता दयाल जी से यही विनय करते हैं,यही वरदान माँगते हैं कि जैसे जैसे ये नव वर्ष पल पल छिन छिन करके आगे बढ़ता जाये वैसे ही हम श्री आज्ञा और मौज अनुसार श्री दरबार के पावन नियमों का पालन करते हुयेआपका सहारा लेकर पिछली कमियों को दूर करके श्री सतगुरु देव दाता दयाल जी की प्रसन्नता के पात्र बनें यही नव वर्ष में श्री चरणों में हम सबकी हार्दिक अभिलाषा और प्रार्थना है।



## दीपावली

दीपावली का शुभ पर्व त्रेता युग से लेकर आज तक पूरे विश्व में बड़े हर्ष उल्हास के साथ मनाया जाता है।आज के दिन अर्थात कार्तिक की अमावस्या को भगवान श्रीरामचन्द्र जी महाराज,रावण और सभी राक्षसों का नाश करके श्रीलंका पर विजय प्राप्त कर श्रीसीता जी को रावण की कैद से छुड़ाकर चौदह वर्ष के बनवास की अवधि के पश्चात् अयोध्या में वापिस आये थे। श्रीराम जी के भाई भरतऔर अयोध्यावासी जो कि अपने इष्टदेव के पावन श्री दर्शन पाने के लिये चौदह वर्ष से व्याकुल थे आज के दिन श्री सीता जी एवम् लक्ष्मण जी सहित भगवान के श्री दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त किया था। इसी खुशी में उन्होने एक दूसरे को मुबारकबाद दीं,मिठाईयां बाँटी, पटाखे छोड़कर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की और उस दिन घर घर में पूरे नगर में दीप जलाये गये। भक्तों और प्रेमियों का भगवान से मधुर मिलन का ये शुभ पर्व है। इसी इतिहास को याद करके ही आज तक हर वर्ष ये पर्व बड़ी धूमधाम और इसी भावना से मनाया जाता है कि अपने इष्टदेव भगवान से हमारा सदा के लिये शुभ मिलन हो जिससे जीवन में सदा ही खुशी औरआनन्द भरपूर रहे सदा ही दीपावली रहे।

हर युग में समय समय पर जीवों को काल और माया के पंजे से छुड़ाने के लिये अपने प्रेमियों और भक्तों को सच्चा आनन्द प्रदान करने के लिये परमपिता परमात्मा विभिन्न रूप में अवतार लेकर ऐसी दिव्य लीलायें करते हैं। जिन्हे देखकर उन लीलाओं को पढ़ सुनकर भक्त व प्रेमी जन सच्चे सुख और आनन्द का अनुभव कर सकें और उन

महापुरुषों के आदर्शमयी जीवन से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को सुखी एवम् सफल कर सकें। वैसे तो श्री रामायण के जितने भी पात्र हैं हर पात्र का जीवन अनुकरणीय है, किन्तु भगवान श्रीराम जी ने जो दिव्य लीलाएं और आदर्श संसार में प्रस्तुत किये हैं वे सब अद्वितीय हैं,बेजोड़ हैं,अतुलनीय हैं,अनुपम हैं। उनकी मातृ पितृ भक्ति,गुरुभक्ति, भ्रातृ प्रेम,सेवकों से प्राणों से भी अधिक प्यार,मैत्री, भाव,सुख-दुःख,हानि-लाभ, यश-अपयश आदि में समभाव,अयोध्या के राज में और बनवास में कुछ भी अन्तर नही प्रतीत होना,हर एक स्थिती को सम कर जानना। उनके किसी भी पक्ष को लें सभी अनुकरणीय हैं।

प्रति वर्ष दीपावली का पर्व मनाने का भाव यही है कि भगवान श्री राम जी के इन दिव्य गुणों का हमारे जीवन में भी समावेश हो और अपने इष्टदेव भगवान से सदा ही मधुर मिलन रहे। जिससे रोम रोम प्रभु प्रेम और नाम के दीपक से सदा प्रज्जवलित रहे। जीवन में सदा ही खुशी और आनन्द रहे। अब देखना ये है कि क्या जिस अर्थ या भावना को लिये हुये ये पर्व है क्या संसारी लोग उसी भावना से मनाते भी हैं या नहीं। संसार में अगर गौर से देखा जाये तो मालूम होता है कि आमतौर पर पुरानी चली आ रही परम्परा या रीति रिवाज़ अनुसार पटाखे जला लिये मिठाईयाँ बाँट दी और मिट्टी के दीपक जला दिये इसी प्रथा को निभाकर इस पर्व की इति श्री कर ली। कुछ समय के लिये खुशी व्यक्त कर ली। बस। उनका त्यौहार केवल यहीं तक सिमित रहता है बल्कि आजकल तो भगवान की पूजा छोड़कर,उनसे शुभ मिलन का यत्न त्यागकर केवल लक्ष्मी की पूजा में ही लग गये। जिस प्रकार पहले



सांसारिक धन को प्राप्त करने के लिये दिन रात प्रयत्नशील थे दुःखी परेशान और चिन्ताओं से घिरे हुये थे केवल पटाखे दीपकआदि जलाकर रीति निभाकर फिर उसी सांसारिक धन के पीछे दौड़ने लगे और फिर से चिन्ताओं और परेशानियों में घिर गये कहाँ तो अपने इष्टदेव से मिलाप हासिल करना थाऔर कहां इसके विपरीत धन को ही प्राप्त करने में संलग्न हो गये। त्यौहार तो प्रभु मिलन का और पूजा कर रहे हैं केवल लक्ष्मी की। इसलिये आम सांसारियों की दीपावली वास्तव में दीपावली नहीं कही जा सकती। क्योंकि न तो उन्हें अपने प्रभु से मिलन हुआ और न ही उनको प्राप्त करने के यत्न में लगते हैं। लेकिन गौर से देखा जाये तो गुरुमुख ही वास्तव में दीपावली मनाते हैं। बल्कि उनकी हमेशा ही दीवाली है। क्योंकि उन्हें अपने इष्टदेव सतगुरु के साक्षात पावन श्री दर्शन उनकी चरण शरण,नज़दीकी उनका सामीप्य और सानिध्य हमेशा ही प्राप्त है। गुरुमुख जन काम क्रोध आदि के पटाखे जला कर प्रभु के प्रेम के अमृत का रसपान करके अपने घट में प्रभु भक्ति और नाम का दीप जलाते हैं। सतगुरु का दर्शन अपने घट में नित्य प्रति करते हैं इसलिये गुरुमुख का रोम रोम दीपक बनकर प्रभु के प्रकाश से प्रज्जवलित रहता है। इसलिये उनकी हमेशा ही दीवाली है।सन्त दीवाली नित करें सतलोक के माहिं। संसारियों के दीपक जो मिट्टी के रात भर जले कुछ ही देर बाद जलकर बुझ जाते हैं लेकिन गुरुमुखों के जो रोम रोम में प्रज्जवलित दीपक हैं हमेशा ही जलते रहते हैं कभी बुझते नहीं। संसारियों का आनन्द खुशी केवल कुछ ही समय के लिये है गुरुमुख हमेशा ही जीवन सुखपूर्वक बितातें हैं परलोक में भी आनन्द प्राप्त करते

हैं। क्योंकि उन्हें हमेशा ही अपने इष्टदेव से मधुर मिलन है। इसलिये गुरुमुखों की ही वास्तविक दीवाली है ऐसी दीपावली की सभी गुरुमुखों को लाख लाख बधाई।



## शुभ जन्म दिवस 20 सितम्बर 1926

हमारे इष्टदेव,हृदय सम्राट, युग पुरुष,श्री परमहँस अद्वैत मत के पंचम रूहानी जानशीन श्रीश्री 108श्री हुज़ूर सतगुरु देव दाता दयाल जी का आज 77 वाँ (2003) अवतरित दिवस है आज के इस शुभ अवतरित दिवस की सबको लाखों लाख मुबारिकवाद हो। मैं अपनी तरफ से और सभी गुरुमुखों की तरफ से श्री परमहँस महान विभूतियों के श्री चरण कमलों में एवम् श्री हुज़ूर सतगुरु देव दाता दयाल जी के श्री चरण कमलों में शुभ कामनाओं के साथ लाखों लाख मुबारिकबाद अर्पित करता हूँ। तुम जियो हज़ारों साल के साल के दिन हों पचास हज़ार ये हमारी है आरज़ू।

सन्त महापुरुषों का सृष्टि में अवतार संसार में भूले भटके जीवों को सन्मार्ग दर्शाने के लिये,उन्हें काल और माया की कैद से छुड़ाकर दुःखी से सुखी बनाने के लिये ही होता है। वे अपने भक्तों की खातिर कभी राम,कभी कृष्ण,कभी श्री गुरुनानक,के रूपों में हर युग युग में प्रकट हुआ करते हैं। इस वर्तमान युग में भी श्रीपरमहँस महान विभुतियों के रूप में प्रकट हुये हैं। इसी परम्परा केअनुसार ही आज के दिन बीस सितम्बर सन् ईस्वी 1926 सोमवार के शुभ दिन गाँव रायपुर कलाँ, तहसील अजनाला,जिला अमृतसर, पँजाब में श्री परमहँस दयाल जी के पंचम स्वरूप श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी महाराज अवतरित हुये। आप प्रथम बार सन्1942ई. में श्री मान महात्मा दयानन्द जी के साथ श्री आनन्दपुर श्री दर्शन के लिये आये। श्री सतगुरु देव श्री तीसरी पातशाही जी के पावन श्री दर्शन करते ही आपको आत्मानुभूति हुई। श्री

सतगुरुदेव श्री तीसरी पातशाही जी ने कृपा दृष्टि करते हुए आपको समीप बैठाकर विधीवत नाम अभ्यास की युक्ति बताई। सन् 1942 से 1952 तक प्रति वर्ष,वर्ष में दो बार श्री दर्शन के लियेआते रहे। 4जून 1953 को श्री चरणों में विनय कर सर्वस्व समर्पण कर स्थाई रूप से शरणागत हो गये। 2 सितम्बर 1956 को श्री तीसरी पातशाही जी महाराज जी ने आपको साधु वेष प्रदान किया। कुछ समय पश्चात् आप के पिता श्री, श्री दर्शन के लिये श्री आनन्दपुर आये। उन्होंने सतगुरुदेव महाराज जी के श्री चरणों में विनय की कि प्रभो यह तो धन धान्य,ऐश्वर्य सम्पदा सबको त्याग कर फकीर बन गया है।

श्रीगुरुमहाराज जी ने फरमाया हमने तो इन्हें सब सम्पदाओं का मालिक बना दिया है। इस रहस्य को किसकी बुद्धि थी जो समझ सके। केवल एक लीला का रूप समझकर इस रहस्य पर विचार ही न किया जो श्री वचनअनुसार आज सब पर प्रकट है। श्री श्री 108 श्रीसतगुरुदेव श्रीचौथी पातशाही जी की श्रीआज्ञा शिरोधार्य करते हुए10 जून 1970ई. शुभ दिन बुधवार श्री परमहँसअद्वैत मत के लासानी श्रीआनन्दपुर दरबार के रूहानी तख्त पर श्रीपंचम पातशाही जी के स्वरूप में विराजमान हुए।

जिस भक्ति प्रेम और परमार्थ आध्यात्म के वृक्ष का बीज साक्षात परब्रह्म सतगुरुदेव श्री परमहँस दयाल जी श्री प्रथम पातशाही जी ने बोया और उस अंकुरित पौधे को श्री सतगुरुदेव श्री दूसरी पातशाही जी ने श्री आनन्दपुर में लगाया और उस भक्ति प्रेम और परमार्थ के पौधे को श्री परमहँस अवतार सतगुरुदेव श्री तीसरी पातशाही एवम् श्रीचौथी पातशाही जी नेअपने दिव्य विग्रह की एक एक बूँद से सींचकर बड़ा किया उस



भक्ति प्रेम व आध्यात्म के वृक्ष की शाखाऐं श्री परमहँस दयाल जी के पंचम स्वरूप श्री हुज़ूर सतगुरु दाता दयाल जी केअनथक प्रयास से आज विश्व के कौने कौने तक फैल रही हैं। जिसकी विशाल शीतल और सुखद छाया में आकर संसार के लाखों दुःखी संतप्त जीव शाश्वत आनन्द और सच्ची शान्ति को प्राप्त कर अपने जीवन को सफल बना रहे हैं और इस वृक्ष पर लगे पाँच प्रकार के अमर फल (श्रीआरती पूजा, सतसंग,सेवा,दर्शन और सुमिरण ध्यान)जिसे श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी अपनी असीम कृपा से मुक्त हस्त से सभी को बाँट रहे हैं। सब की झोलियां भर रहे हैं। और जिसे प्राप्त करके लाखों जीव अमर पदवी को प्राप्त करने में संलग्न हैं।

विश्व के हर कौने कौने में हम जीवों के कल्याण के लिये श्री परमहँस अद्वैत मन्दिरों का निर्माण कराके श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी ने हम पर जो महान उपकार का कार्य किया है वह किसी से छिपा हुआ नहीं है। सतगुरुदेव जी के इन महान उपकारों का जीव ऋण नहीं चुका सकता। श्री सतगुरु देव जी की महिमा अपरम्पार है इनकी महिमा का वर्णन कर सकना मानव बुद्धि से परे है मानव बुद्धि में इतनी सामर्थ्य नहीं जो सतगुरु देव जी की महिमा का वर्णन कर सके। जिन प्रेमियों ने सतगुरु देव जी की महिमा का कुछ कुछ अनुभव किया है उन्होंनें इसे इन शब्दों में व्यक्त करने का प्रयास किया है। खूबियाँआपकी क्या क्या गिनवायें आपकी किस किस अदा पर बलि जायें। आपकी
हर लीला हमारा दिल लुभाती हैआपकी हरमौज पर क्यों न मिट जायें।
एक दफतर भी कम है कागज़ का ज़िक्र आपका लिखने पर गर आयें।

समुन्द्र स्याही का भर लें कलमों के ढेर लगवायें।
मुख में ज़ुबाने लाखों हों लिखने को फरिश्ते बिठलायें।
तो भी खत्म न होगा पावन वर्णनआपका।गर कलम पर कलम तोड़ते जायें। एक बार जो भी आपके सामने आया आपका ही होकर जाता है।
एक बार जो आपसे हमकलाम हुआ उम्र भर आपके गीत गाता है।
चाँद तारों में आफताब हैं आप सच पूछो तो लाज़वाब हैं आप।।

हम अति सौभाग्यशाली हैं जो हमें श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी के पावन दर्शन,भक्ति प्रेम औरआध्यात्म के वृक्ष की सुखद शीतल छाया में बैठने का सौभाग्य प्राप्त है हमारा कर्तव्य है कि श्री हुज़ूर के सुन्दर मनोहर छवि को अपने हृदय में बसाते हुए उनकी असीम कृपा से प्राप्त पाँचों अमर फलों का श्रद्धा भक्ति से सेवन करते हुए अपने जीवन को सुखी बनायें और अमर पदवी को प्राप्त करके परलोक सँवार लें।



## राज्य अभिषेक 10 जून 1970

हमारे परम इष्टदेव,हृदय सम्राट, युग पुरुष,श्री परमहँस अद्वैत मत के पंचम रूहानी जानशीन,श्री श्री 108 श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी के राज्य अभिषेक अर्थात राजतिलक की 34वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में आज के इस शुभदिवस की सभी गुरुमुखों को लाखों लाख मुबारक वाद हो। श्री हुज़ूर सतगुरु देव दाता दयाल जी महाराज इस लासानी श्री आनन्दपुर दरबार के रूहानी तख्त पर युगों युगान्तरों तक विराजमान होकर हमारे हृदय पर शासन करते रहें हम सबकी यही हार्दिक शुभ कामना है।

सभी गुरुमुखों ने श्री गुरुमहाराज जी के शुभ मस्तक पर श्रद्धा भाव सहित तिलक लगाया है निश्चित ही गुरुमुख वधाई के पात्र हैं। अपने इष्टदेव की पूजाअर्चना में जो जो सामग्री भेंट की जाती है,जो जो अर्ध्य दिया जाता है या जो जो क्रियाएं की जाती हैं उन सभी क्रियाओं में कोई न कोई भाव संजोया होता है। मस्तक पर तिलक लगाने में भी कोई महत्व, रहस्य या भाव समाया हुआ है।

हमारे परम आराध्यदेव श्री परमहँस दयाल जी श्री प्रथम पातशाही जी महाराज जिन दिनों जयपुर में विराजमान थे उन्ही के वचनानुसार उन दिनों की एक घटना का वर्णन मिलता है जो तिलक लगाने से सम्बन्धित है। श्री वचन अनुसार जयपुर के महाराजा रामसिंह साधु सेवी एवं सत्संग प्रेमी थे। उनका ये दस्तूर था कि जयपुर में जितने भी सम्प्रदाय या मत थे उनके साधु सन्तों व ब्राह्मणों कोआमन्त्रित कर सप्ताह में एक दिन सत्संग का आयोजन किया करते थे उस आयोजन में सभी सम्प्रदाय

या मत वाले अपने अपने मत के सिद्धान्तों का वर्णन किया करते थे। जिस मत वालों के सिद्धान्त महाराजा को पसन्द आते थे उस मत का प्रचार करने में महाराजा मदद भी करते थे। एक दिन शैव मत वालों और वैष्णव मत वालों ने अपने अपने सिद्धान्तों का वर्णन किया। उसमें शैव मत वालों के सिद्धान्त महाराजा को इतने पसन्द आये कि उन्होंने पूरे राज्य में घोषणा करवा दी कि कोई भीअपने मस्तक पर त्रिपुण्ड नहीं लगायेगा।अगर कोई त्रिपुण्ड लगायेगा तो राज्य सरकार से जो मासिक बन्धान दिया जाता है वह बन्द कर दिया जायेगा।

नोट-शैव मत वाले आड़ी तीन लकीरें धनुष के आकार की अपने मस्तक पर लगाते हैं और वैष्णव मत वाले खड़ीं तीन लकीरें त्रिशूल के आकार की लगाते हैं जिन्हें त्रिपुण्ड कहते हैं। लगभग सभी वैष्णव साधुओं ने राजा की आज्ञा का पालन किया। त्रिपुण्ड छोड़कर धनुषाकार तिलक लगाने लगे। लेकिन जो जगन्नाथ मन्दिर के पुजारी श्री हनुमानदास जी थे उन्होंने इस राजआज्ञा का पालन नहीं किया।सप्ताह में जब सतसंग का आयोजन हुआ उस में शैव मत वालों और राज्य कर्मचारियों ने महाराजा से इस बात की शिकायत कर दी। महाराजा रामसिंह ने श्री हनुमान दास जी से कहा आपने राजआज्ञा का पालन नहीं किया इसलिये आपकी आर्थिक सहायता बन्द कर दी जाती है। आपने इस राज आज्ञा का पालन क्यों नहीं किया? श्री हनुमान दास जी ने उत्तर दिया बन्धान मिले या न मिले इससे कोई फर्क नहीं पड़ता भगवान जगन्नाथ जी को आवश्यकता होगी तो वे स्वंय अपने स्रोत निकाल लेंगे परन्तु कृप्याआप ये बतायें कि आपको त्रिपुण्ड न लगाने में इतना आग्रह और कोशिश



क्यों है? इस पर उल्टे महाराजा ने प्रश्न किया आपको इसमें एतराज़ ही क्या है? श्री हनुमान दास जी ने रामायण की चौपाई पढ़कर उत्तर दिया।

शिव द्रोही मम भक्त कहावा। तो नर सपनेहूं मोहे न पावा।।
शंकर विमुख भक्ति चहे मोरी। तो नर मूढ़ मतिमन्द अति थोरी।
शंकर प्रिय मम द्रोही, शिव द्रोही मम दास।।
सो नर करहिं कल्प भर, घोर नरक में वास।।

भगवान श्रीराम फरमाते हैं कि जो शिव का द्रोही है मेरा दास बनना चाहता है वह स्वपन में भी मुझे प्राप्त नहीं कर सकता।जो शिव का प्रिय है मेरा द्रोही है वह कल्प भर घोर नरक में वास करता है। हम चूँकि वैष्णव हैं भगवान श्रीराम जी को मानने वाले हैं इस चौपाई में भगवान श्रीराम जी की आज्ञा शिव को मानने की है भगवान शिव का अस्त्र त्रिशूल है इसलिये हम त्रिशूल के आकार का तिलक लगाकर ये इज़हार करते हैं कि भगवान शिव भी हमारे सर माथे पर हैं। श्रीराम का अस्त्र धनुष है इसलिये शैव धनुषाकार तिलक लगाकर ये इज़हार करते हैं कि भगवान श्रीराम हमारे सर माथे पर हैं। अगर हम इस चौपाई का पालन नहीं करेंगे अर्थात त्रिपुण्ड नहीं लगायेंगे तो भगवान श्री राम जी कीआज्ञा का पालन नहीं हो सकेगा और इसमें भगवान शिव का अपमान है। इसलिये हम त्रिपुण्ड ही लगायेंगे। इस उत्तर से राजा बहुत प्रसन्न हुये उन्होंने घोषणा करवा दी कि कोई कैसा भी तिलक लगाये लगा सकता है। इस कथा का और तिलक लगाने का ये महत्व हुआ, ये अर्थ हुआ कि इष्टदेव हमारे मस्तक पर विराजमान हैं।

शंका हो सकती है कि हमने तो तिलक श्री गुरुमहाराज जी के

मस्तक पर लगाया है अपने मस्तक पर नहीं। कारण इसका ये है कि जो भगवान शिव के भक्त हैं या भगवान श्रीराम जी के। उन्हें तो कदाचित अपने इष्टदेव के साक्षात श्री दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं है इसलिये वे केवल अपने(अन्तर मे) मस्तक पर विराजमान अपने इष्टदेव को ही तिलक लगाने का भाव प्रकट करते हैं। लेकिन गुरुमुखों को तो अपने इष्टदेव सतगुरु के साक्षात श्री दर्शन का सौभाग्य हमेशा ही प्राप्त है। इसलिये गुरुमुखजन पूजाअर्चना में सतगुरु के मस्तक पर तिलक लगाते हैं।जैसे सन्त तुलसीदास जी को जब तक भगवान श्रीराम जी के साक्षात श्री दर्शन नहीं हुये थे तो वह केवल अपने ही मस्तक पर तिलक लगाते रहे। जब हनुमान जी की कृपा से साधु सन्तों के रूप में भगवान श्रीराम व लक्ष्मण जी के पावन श्रीदर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो उन्होंने उनके मस्तक पर भी तिलक लगाया।

चित्रकूट के घाट पर भयी सन्तन की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसें तिलक करें रघुवीर।।

हमारे परम आराध्यदेव श्री परमहँस दयाल जी श्री श्री108श्री परमहँस सतगुरुदेव श्री प्रथम पातशाही जी भक्ति ऋंगार के शब्द की रचना करते हुये फरमाते हैं।

करूँ मैं भक्ति ऋंगार नाथ महारानी होईयों।।
सत्य के सिन्दूर इंगुर पुण्य मन्दिर काजर देईयों।।
माँग टीका त्रिकुटी लौ लागे हरि जी के दर्शन पईयों।।

अर्थात हे प्रभु,नाथ,मैं भक्ति का ऋंगार करके आपकी महारानी होना चाहती हूँ, ऋंगार कैसा हो? सत्य का सिंदूर हो पुण्य कर्मों का काजल



मेरी आँखों में होगा और मेरी माँग में जो टीका है वह त्रिकुटी में लौ लगा के हरि जी के(आपके) श्री दर्शन पा लूँगी। त्रिकुटी में लौ लगाने का ईशारा है तिलक चिन्ह है कि वह अनामी पुरुष सतलोक के वासी सन्त सतगुरु का आसन पिण्ड और ब्रह्माण्ड की सीमा त्रिकुटी पर है जहाँ विराजमान होकर संसार की माया की दलदल में फँसी रूहों को निकाल कर सतलोक में पहुँचाने का कार्य सम्पादन करते हैं। सतगुरु का एक कर कमल मृत्यु लोक में दूसरा सतलोक में होता है शरणागत जीवों को मृत्यु लोक से एक हाथ से पकड़कर दूसरे हाथ से सतलोक में पहुँचा देते हैं।

त्रिकुटी का रंग लाल है इसलिये गुरुमुख लाल रंग का तिलक लगाते हैं ताकि उस स्थान पर ध्यान लगाकर अपने इष्टदेव सतगुरु के दर्शन प्राप्त करे। सही अर्थों में जब जिज्ञासु त्रिकुटी में इष्टदेव के दर्शन करता तब ही गुरुमुख कहलाने का अधिकारी होता है। त्रिकुटी में जिस सुन्दर स्वरूप के दर्शन करता है उस मनोहारी छवि को गुरुमुख अपने हृदय के सिंहासन पर विराजमान करके सदा आनन्दित रहता है। जिससे उसका जीवन सफल हो जाता है जिसके हृदय पर सतगुरु का आसन और शासन हो वह अति सौभाग्यशाली है उसका जीवन भी सुखमयी बीतता है और परलोक भी सँवर जाता है।श्री हुज़ूर हमारे हृदय के सिंहासन पर सदा विराजमान रहें यही हार्दिक कामना है।

## राज्य अभिषेक (2)

जिस प्रकार संसार में किसी देश या राज्य में प्रजा की सुख समृद्धि के लिये और राज्य में शान्ति औरअनुशासन की व्यवस्था बनाये रखने के लिये देश के राज सिंहासन पर कोई न कोई शासक,सम्राट या राजा हुआ करता है। राज सिंहासन कभी भी खाली नहीं होता। इसी तरह ही सृष्टि में जीवों के कल्याण के लिये,संस्कारी रूहों को सच्चा सुख और आत्मिक शान्ति प्रदान करने के लिये आध्यात्मिक जगत के राजसिंहासन पर भी कोई न कोई रूहानी बादशाह या आध्यात्मिक शासक अवश्य ही हुआ करता है जिसे जगद्गुरु या सन्त सतगुरु कहते हैं।जो कि निराकार परमात्मा के सगुण साकार रूप होते हैं। जिन्हें परमात्मा का नितअवतार कहा जाता है। नित का अर्थ है जो सदा ही रहे।सन्त महापुरुष सृष्टि के आध्यात्मिक जगत के राज सिंहासन पर सदा विराजमान रहते हैं इन महापुरुषों का सृष्टि में कभी भी अभाव नहीं होता है। जैसे कहा भी है--

आग लगी आकाश में झर झर परत अंगार।
सन्त न होते जगत में जल मरता संसार।।

अगर सृष्टि में महापुरुषों का अभाव हो जाये तो सृष्टि कायम नहीं रह सकती क्योंकि संसार के जीव आशा,तृष्णा,काम, क्रोध आदि की अग्नि में जलकर भस्म हो जाते। सारी सृष्टि सन्तों केआधार पर ही टिकी हुई है। इसलिये महापुरुष ही आध्यात्मिक जगत के राजसिंहासन पर हमेशा ही विराजमान होकर इस संसार में जन कल्याण का कार्य करते रहते हैं। जब से सृष्टि बनी है तब से लेकर आज तक,सतयुग से लेकर कलयुग तक के प्रत्येक युग के इतिहास पर दृष्टिपात करने से



यही मालूम होता है कि इस संसार में कोई न कोई महापुरुष विराजमान रहे हैं। उदाहरण के तौर पर देवर्षि नारद जी,ब्रह्मर्षि वशिष्ठ,ब्रह्मर्षि विश्वामित्र,कपिल,गौतम, वेदव्यास, महात्मा बुद्ध, महावीर जैन,ईसामसीह, हज़रत मुहम्मद साहिब,परमसन्त श्री कबीर,श्री गुरुनानकदेव जी आदि और भी अनेकों पूज्यनीय महापुरुष हुये हैं। ये महापुरुष चाहे किसी भी देश के हुये हों किसी भी मज़हब के हों लेकिन सभी ने एक ही सत्य का उपदेश दिया है। सबके उपदेश सिद्धान्त तरीके एक ही रहे हैं। जिनमें कुछ भी अन्तर नहीं होता फर्क केवल इतना ही होता है कि समयानुसार भक्ति,प्रेमऔर मोक्ष की कुंजी एक घर से दूसरे घर चली जाती है। परमात्मा अपने आपको कई रूपों में इसलिये प्रकट करता है कि पुरानी व्यवस्था या प्रणाली चाहे कितनी ही अच्छी ही क्यों न हो प्राकृतिक नियमानुसार उसमें परिवर्तन होने के कारण उससे गुमराह होने का अन्देशा रहता है। आप देखेंगे कि प्राचीन महापुरुषों के अनुयायियों को भी भजन अभ्यास सम्बन्धी तरीकों का ज्ञान नहीं रहता जो कि उन महापुरुषों की शिक्षाओं का सार था।

इसी परम्परा के अनुसार ही आज के दिन 20 सितम्बर सन्1926 सोमवार के शुभ दिन गाँव रायपुर कलाँ,तहसील अजनाला, अमृतसर जिला पंजाब मे श्रीहुज़ूर सतगुरुदेव पंचमपादशाही जी महाराज अवतरित हुये। आप प्रथम बार सन् 1942 ई में श्री मान महात्मा दयानन्द जी के साथ श्री आनन्दपुर श्री दर्शन के लिये आये। श्री सतगुरुदेव श्री तीसरी पातशाही जी आपको पाकर अति प्रसन्न हुये और श्री सतगुरुदेव जी के पावन श्री दर्शन करके आपको आत्मानुभुति हुई। 2 सितम्बर 1956 ई.

को आपको साधु वेष प्रदान किया। कुछसमय पश्चात् आपके पिता श्री, श्री दर्शन के लिये श्रीआनन्दपुर आये। उन्होंने सतगुरुदेव महाराज जी के श्री चरणों में विनय की कि प्रभो यह तो धन धान्य ऐश्वर्य सम्पदा सबको त्यागकर फकीर बन गया है।श्रीगुरुमहाराज जी ने फरमाया हमने तो इन्हें सब सम्पदाओं का मालिक बना दिया है। इस रहस्य को किसकी बुद्धि थी जो समझ सके। केवल एक लीला का रूप समझकर इस रहस्य पर विचार ही न किया जो श्री वचनअनुसार आज सब पर प्रकट है। श्री श्री 108 श्री सतगुरुदेव श्री चौथी पातशाही जी की श्री आज्ञा शिरोधार्य करते हुए 10 जून 1970 ई. शुभ दिन बुधवार श्री परमहँस अद्वैत मत के लासानी श्री आनन्दपुर दरबार के रूहानी तख्त पर श्रीपंचम पातशाही जी के स्वरूप में विराजमान हुए। उस दिन आपके शुभ भाल पर तिलक किया गया तब श्री आरती पूजा का कार्य सम्पन्न हुआ। रूहानी सिंहासन पर विराजमान होकर जनकल्याण का कार्य कर रहे हैं। जीवों का उद्धार करना काल और माया की कैद में आये हुये दुःखी जीवों छुड़ा करके दुःखी से सुखी बनाना अपने निजधाम अनन्त सुख के धाम में ले जाना ही महापुरुषों का मिशन होता है। वे संसार में ऐसी रचना रचाते हैं जीवों के लिये भक्ति प्रेम के सुलभ साधन बना देते हैं जैसे श्री आरती पूजा, सतसंग,सेवा,सुमिरण ध्यान,सुरत शब्द योग ये आध्यात्मिक साधन हैं जिन पर चल कर सभी जीव अपने जीवन को सुखमयी और परलोक सुर्खरू बना सकते हैं।

श्री हुज़ूर सतगुरुदेव दाता दयाल जी ने हम जीवों पर उपकार और जीव कल्याण का जो महत्वपूर्ण कार्य किया है किसी से छिपा हुआ नहीं



है। जगह जगह पर श्री परमहँस अद्वैत मन्दिरों का निर्माण कराकर जीवों को घर बैठे ही भक्ति और प्रेम के सुगम साधन उपलब्ध करा दिये हैं।श्री आनन्दपुर का विस्तार,श्रीप्रयागधाम,श्री सन्तनगर, परमधाम ग्वालियर, सुखधाम,अमरधाम इत्यादि और भी आश्रमों का निर्माण किया है। श्री सतगुरु दाता दयाल जी की महानता का प्रमाण ये है कि आज भारतवर्ष तो क्या संसार के कौने कौने में उनके नाम और उपदेश का डंका बज रहा है और लाखों जीव उनके चरण कमलों की छाया में अपने जीवन को धन्य बना रहे हैं। मानव बुद्धि में इतनी सामर्थ्य नहीं कि इनके गुणों की थाह पा सके। एक साधारण सा दीपक जो बत्ती और तेल का मुहताज है उसमें सामर्थ्य कहाँ जो सूर्य के अस्तित्व को दर्शा सके। नमक की डली समुन्द्र की थाह कैसे पा सकती है। ये जितनी थोड़ी बहुत महिमा गाई गई है खलिहान में से एक मुट्ठी अन्न के दाने के बराबर है जो थोड़ी और अधूरी है। एक प्रेमी ने अपने उदगार प्रकट करते हुये कहा है। खूबियाँ आपकी क्या क्या---।हम सब बड़े खुशनसीब हैं जिन पर वक्त के सन्त सतगुरु के श्री चरण कमलों का साया और उनका वरदहस्त सीस पर है। ये लासानी व रूहानी श्री दरबार मिला,भक्ति के सुगमसाधन मिले हमारा कर्तव्य है कि सतगुरु की ये प्यारी छवि अपने हृदय के सिंहांसन पर विराजमान करके श्री आज्ञा और मौज अनुसार श्री दरबार के पाँचों नियमों का नितप्रति श्रद्धा से पालन करते हुये अपने जीवन को सुखमयी और परलोक को सुर्खरू बनायें।

## अवतार

श्री मद्भगवत गीता और रामायण दोनों सर्वमान्य एवम् पावन ग्रन्थ हैं इन दोनों ग्रन्थों में और अन्य प्राचीन शास्त्रों और पुराणों में वर्णन किया गया है कि सृष्टि में भगवान काअवतार दुष्टों और राक्षसों का नाश करने के लिये साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिये,धर्म और सत्य की ध्वजा फहराने के लिये हर युग युग में हुआ करता है। श्रीमद्भगवदगीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अपनेअवतार धारण करने का मकसद स्वयं अपने श्री मुख से फरमाया है।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।।
अभ्युत्थानम् धर्मस्य तदात्मानम् सृजाम्हम्।।
परित्राणाय साधुनाम् विनाशनाय च दुष्कृताम्।।
धर्म स्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

अर्जुन के प्रति कथन करते हैं कि हे भारत सृष्टि में जब जब धर्म का नाश होता है पाप और बुराई बढ़ने लगती है तब तब में साधु पुरुषों के उद्धार के लिये पापियों के नाश के लिये और धर्म की स्थापना के लिये हर युग युग में प्रकट होता हूं। श्री रामायण में सन्त तुलसीदास जी वर्णन करते हैं।

जब जब होये धर्म की हानी। बाढ़हिं अधम असुर अभिमानी।
तब तब प्रभु धरहिं विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।

कि जब जब धर्म की हानि होती है पापी औरअधर्मी और पाखण्डी बढ़ जाते है तब तब प्रभु विविध,विभिन्न प्रकार के रूप धार कर अपनी कृपा करके सज्जन पुरुषों के दुःखों कलेशों का निवारण करते हैं।भगवान का



यह अवतार धारण करना लीला करना और रचना रचाना आदि काल से चला आ रहा है। और इसी प्रकार ही प्रलय तक चलता रहेगा। कभी वे निमित्त अवतार बन कर प्रकट होते रहे हैं और होते रहेंगे। भगवान के निमित्त अवतार वे होते हैं जो किसी खास रूह (व्यक्ति) के निमित्त आते हैं। जैसे सतयुग में ध्रुव भक्त के लिये भगवान विष्णु का अवतार हुआ।भक्त प्रहलाद के उद्धार के लिये और हिरण्यकशिपु के विनाश के लिये नरसिंह अवतार हुआ। त्रेतायुग में रावण कुम्भकरण और द्वापर युग में कंस शिशुपाल जैसे असुरों के नाश के लिये भगवान श्रीराम और श्री कृष्ण अवतार हुआ। ये भगवान के निमित्त अवतार हैं और नित अवतार होते हैं सन्त महापुरुष। सन्त सतगुरु। नित का अर्थ होता है सदा ही। जो हमेंशा ही इस सृष्टि के आध्यात्मिक जगत के सिंहासन पर सन्त सतगुरु के रूप में प्रकट होकर विरामान रहते हैं। इन महापुरुषों में और परमात्मा में कोई भेद नहीं होता। सन्त मौलाना रूम साहिब फरमाते हैं कि मुर्शिद में खुदा और पैगम्बर दोनों ही समाये हुये हैं। जो कोई परमात्मा के समीप बैठने का इच्छुक है उसे चाहिये कि वह सतगुरु की हुज़ूरी में बैठे क्योंकि इन आत्मज्ञान के धनी महापुरुषों की हुज़ूरी ही परमात्मा की हुज़ूरी है। अपने जीवन का अनुभव व्यक्त करते हुये एक फकीर कथन करते हैं।

आप से कहनी मुझे इक बात है।मुर्शिदे कामिल खुदा की ही तो ज़ात है।
गुमशुदा रूहों की राहनुमाई के लिये। तालिबाने हक की मन्ज़िल तक रसाई के लिये। वो खुद आता ही रहा है आता ही रहा है।
ये आज की नहीं चली आई अजल से ये बात है।।

कामिल मुर्शिद या पूर्ण सतगुरु निर्गुण निराकार परमात्मा के सर्गुण साकार रूप होते हैं जो गुमशुदा रूहों की राहनुमाई के लिये प्रकट होते हैं। जो जीव शाश्वत आनन्द और परमशान्ति के भण्डार परमात्मा से कई जन्मों से बिछुड़कर दुःखी हो रही हैं वो फिर से अपनी मन्ज़िल उस शाश्वत आनन्द को प्राप्त करने के लिये व्याकुल हैं जो अज्ञानता वश संसार के मोह माया में भटक रहीं हैं उन्हें सन्मार्ग दर्शाने के लिये उन्हें राहे रास्ते पर लगाने के लिये उन्हें उनकी मन्ज़िल परमात्मा के चरणों तक पहुँचाने के लिये उन्हे दुःखी से सुखी बनाने के लिये ही वो स्वयं परमपिता परमात्मा नित अवतार बनकर सन्त सतगुरु के रूप में आता ही रहा है ये आज की नहीं जब से सृष्टि बनी है प्रकट होते रहें हैं और प्रकट होते रहेंगे।

प्रत्येक युग के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यही विदित होता है कि हर युग में समय समय पर सन्तमहापुरुष अवतार पीर पैगम्बर जगत को सन्मार्ग दर्शाने के लिये प्रकट होते रहें हैं। जब जब भी मनुष्य माया का दास बना है,मोह लोभ तृष्णा की ज्वाला में झुलसा है और जीव ने माया के पर्दे से आत्म ज्ञान को भुला दिया है, सत्य ज्ञान भक्ति परमार्थ का विनाश हुआ तब तब सन्त महापुरुषों के रूप में प्रकट होकर संसार में भक्ति,प्रेम,ज्ञान की गंगा बहाई। जैसे श्री महर्षि वशिष्ठ,श्री वेदव्यास, परमसन्त श्री कबीर साहिब,श्री गुरुनानकदेव जी,बाबा फरीद, ईसामसीह, महात्माबुद्ध और भी अनेक रूपों में प्रकट होकर भक्ति के अनुपम रहस्य बतलाकर जगत में प्रेमाभक्ति ज्ञानऔर भजनअभ्यास सम्बन्धी उपदेशों से आत्म साक्षात्कार का पथ दर्शाकर सृष्टि में नवजीवन का संचार किया।



वह परमपिता परमात्मा देश के हर कौम में, हर जाति में,धर्मनिष्ठ महापुरुष बन कर के अवतार धारण करते रहे हैं। इन महापुरुषों ने चाहे वह किसी भी धर्म देश या मज़हब के क्यों न हुये हों सभी ने एक ही सत्य का उपदेश दिया है। सिद्धान्त तरीके उपदेश वही होते हैं सिर्फ भक्ति ज्ञानऔर मोक्ष की कुन्जी कुछ समय बाद एक घर से दूसरे घर चली जाती है।

अपने प्रेमी भक्तों के दुःखों कष्टों के निवारण का भगवान का विरद आज भी उतना ही सच्चा है जितना कि सतयुग और त्रेतायुग में था। जो महान कार्य भगवान ने अन्य युगों में किया वही महान कार्य इस युग में श्री परमहँसअवतार के रूप में सम्पादन कर रहे हैं।

युग युग में प्रभु भक्तों सन्तों के रक्षपाल दयाल बने।
कभी रूद्र रूप जा दिखलाया कभी तो मधुर रसाल बने।
कभी भक्त प्रह्लाद उबारन को हिरण्यकशिपु के काल बने।
कभी वृन्दावन में ग्वालों के संग मिलकर बाल गोपाल बने।
कलयुग में जगतारण को धर सन्त रूप श्री परमहँस दयाल बने।।

इसी परम्परा के अनुसार ही आज के दिन---श्री परमहँस अद्वैत के---- रुहानी जानशीन का अवतार हुआ।---------मुबारिक बाद हो।

महापुरुष युग युग में प्रकट होकर संसार के दुखी जीवों को सुख रूप बनाने के लिये ऐसी रचना रचाते हैं जिसमें भक्ति के सुगम साधन जैसे श्री आरती पूजा,सेवा,सतसंग,सुमिरण ध्यान,सुरति शब्द योग आदि आध्यात्मिक साधन बना देते हैं,जिन पर चलकर सभी जीव अपने को सुखरूप बना सकें ये ऐसे सुगम साधन हैं जिन्हें छोटा बड़ा,अमीर गरीब

निर्बल बलवान,वृद्ध जवान हर कोई बड़ी आसानी से कर सकता है और बेखटके अपनी मन्ज़िले मकसूद पर पहुँच सकता है।

श्री आरती पूजा सेवा सतसंग सुमिरण और ध्यान।
इन नियमों का जो सेवन करे निश्चय हो कल्याण।

श्री गुरुमहाराज जी ने हम जीवों पर महान उपकार करके श्री आनन्दपुर दरबार की रचना की हमारे कल्याण के लिये पाँच सरल नियम साधन बनाये हमारा कर्तव्य है कि श्री आज्ञा मौज अनुसार इन नियमों का नित प्रति श्रद्धा से पालन करें। जिससे मालिक की प्रसन्नता प्राप्त हो हमारा जीवन सफल हो और महापुरुषों का संसार में आने का मिशन पूरा हो।

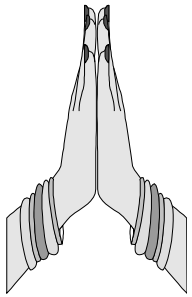



## जन्माष्टमी

जगत को सन्मार्ग दर्शाने कि लिये पृथ्वी का भार हल्का करने के लिये पाप अधर्म की बढ़ती हुई शक्तियों को दबाने के लिये आज से लगभग 5200 वर्ष पहले द्वापर युग के अन्त में कलयुग के प्रारम्भ होने से पहले आज के दिन भाद्रपद की कृष्ण पक्ष कीअष्टमी को भगवान श्री कृष्ण जी ने मथुरा में अवतार लिया। श्री कृष्ण सम्वत् केअनुसार आज श्रीकृष्ण भगवान का 5230 वाँ (सन्2004) अवतरित दिवस है। भगवान श्री कृष्ण के इस अवतरित दिवस अर्थात जन्माष्टमी की सबको मुबारकवाद हो।

श्री मद्भगवत गीता और रामायण दोनों सर्वमान्य एवं पावन ग्रन्थ हैं इन दोनों ग्रन्थों में और अन्य प्राचीन शास्त्रों और पुराणों में वर्णन किया गया है कि सृष्टि में भगवान का अवतार दुष्टों और राक्षसों का नाश करने के लिये साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिये,धर्म और सत्य की ध्वजा फहराने के लिये हर युग युग में हुआ करता है। श्री मद्भगवद गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अपने अवतार धारण करने का मकसद स्वयं अपने श्री मुख से फरमाया है।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम् धर्मस्य तदात्मानम् सृजाम्हम्।
परित्राणाय साधुनाम् विनाशनाय च दुष्कृताम्।
धर्म स्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

अर्जुन के प्रति कथन करते हैं कि हे भारत सृष्टि में जब जब धर्म का नाश होता है पाप और बुराई बढ़ने लगती है तब तब मैं साधु पुरुषों के

उद्धार के लिये पापियों के नाश के लिये और धर्म की स्थापना के लिये हर युग युग में प्रकट होता हूं। भगवान का यह अवतार धारण करना तथा लीला रचाना आदि काल से चला आया है और प्रलय काल तक यों ही चलता रहेगा।

कथा--मथुरा में जन्म लिया---कृष्ण के मामा कंस का राज था--बहन देवकी के विवाह के अवसर पर आकाशवाणी हुई-देवकी का आठवां जो लाल है वही कंस का काल है।कंस ने देवकी वसुदेव को कैद कर दिया और एक एक करके सात सन्तानों को मार डाला-----।

भगवान श्रीकृष्ण जी का पूरा जीवन चरित्र ही महिमामयी है जिसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता।भगवान का गोपियों से महारास, कालीय दहन, द्रौपदी चीरहरण,महाभारत के युद्ध में दुर्योधन आदिकौरवों का नाश पाण्डवों की रक्षा,और भी अनेकों लीलायें श्री मदभागवत में वर्णित हैं। सबसे अनुपम देन जो भगवान श्री कृष्ण ने संसार के जीवों को दी है वह महाभारत शुरू होने से पहले गीता का पवित्र सन्देश है। जिसे पढ़ सुनकर उस पर अमल करके आज तक लाखों जीव अपने जीवन के सुखी एवं सफल बना गये हैं और बना रहें हैं। इस प्रकार भगवान ने प्रकट होकरअपने भक्तों प्रेमियों के दुःखों का निवारण कर उन्हें सच्चा सुख प्रदान किया है।

यह भगवान का विरद है कि वह अपने प्रेमियों के दुःखों कष्टो का निवारण करते हैं उनका यह विरद आज भी उतना ही सच्चा है जितना कि सतयुग,त्रेता,द्वापर युग में था। यदि आज से 5200 वर्ष पहले तथा इससे भी पहले राक्षस दुष्टों का नाश करने के लिये प्रकट हो सकते हैं।



यह महान कार्य जो उन्होंने अन्य युगों में किया था वही महान कार्य वर्तमान युग में भी सम्पादन करते हैं। वर्तमान युग में भी जीव दुष्टों एवं राक्षसों के हाथों पीड़ित है। आज के समय में भी तो पाप अधर्म अनाचार की शक्तियां उसी प्रकार बलवती होती जा रही हैं जिस प्रकार पहले के युगों में प्रबल थीं। अन्तर केवल इतना ही है कि यह शक्तियां कँस तथा रावण के समान किसी प्रदेश के शासक नहीं बल्कि हमारे मन के साम्राज्य पर शासन करने वाले राजा हैं। इन्हें हम मन के पाँच विकारों अर्थात जीव के पाँच शत्रुओं के रूप में जानते हैं। उनके नाम है काम, क्रोध,लोभ,मोह,अहंकार। इनका वर्तमान काल में समस्त संसार पर शासन है प्रदेशों के राजा महाराजा तो इनके हाथों कठपुतलियों के समान हैं। महान शूरवीर योद्धा साहसी,बलवान,विद्वान,चतुर सयाने सभी इन्हीं के संकतों पर चलते हैं।(पारसनाथ,सिकन्दर की कथा)। इन विकार रूपी दुष्टों ने जीवों के दुःखों विपत्ति और परेशानी में डाल रखा है। यह सत्य है कि जब तकमन के राज्य पर इन पाँचों का शासन रहेगा मनुष्य के जीवन में सुख शान्ति और आनन्द कोसों दूर रहेंगे। इसके अतिरिक्त इन शासकों के साथ भारी राक्षसी सेना भी है मन की असंख्य चंचल वृत्तियाँ,पच्चीस प्रकृतियाँ, तरह तरह के सांसारिक भोगों की इच्छाएं, वासनाएं,कामनाएं इत्यादि राग द्वेष इनकी सेना है ये प्रभु भक्ति केअभिलाषी जिज्ञासु का सर्वनाश करने के लिये कभी नहीं चूकते। इनके पँजे में आकर संसारी जीव धीरे धीरे आत्मबल,भक्ति,परमार्थ, परोपकार,श्रद्धा विश्वास,सत्य व ज्ञान से खाली होते जा रहे हैं। यही सदगुण ही तो जीवन है जब मनुष्य में सदगुण ही न रहेंगे तो मनुष्य

जीवन किस काम का? यह विनाश शारीरिक नहीं आत्मिक है आम जीवों को इस बात का आभास हो या न हो लेकिन उनका पतन तो इनके हाथों हो ही रहा है। जब इस प्रकार की परिस्थिती उत्पन्न हो जाती है इससे छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय यही रह जाता है कि हमारे मन के अन्धकारमय जेल में श्री भगवान कृष्ण का शीघ्रातिशीघ्र अवतरण हो तथा वे अपनी लीला द्वारा इस राक्षसों को खत्म कर दें। हृदय में भगवान श्री कृष्ण जी का पावन प्रेम तथा अनन्य भक्ति का संचार हो। यह पवित्र प्रेम ही श्री कृष्ण का रूप है यही प्रेम ही मन के समस्त दूषित विकारों का अन्त कर सकता है। हृदय में जब प्रेम रूप भगवान का अवतार होता है जीव आत्मा को बाँधने वाले सासांरिक मोह बन्धन(जेल केफाटक) अपने आप खुल जाते हैं तथा श्री कृष्ण लीला अर्थात प्रेम का अदभुत खेल आरम्भ हो जाता है। मन रूपी मथुरा नगरी में अहंकार रूपी कंस का राज्य है जब प्रेम रूपी कृष्ण के द्वारा अहंकार रूपी कंस मार दिया जाता है तब हृदय की नगरी में चहुँ ओर सुख शान्ति आनन्द का साम्राज्य छा जाता है। यही वास्तविक जन्माष्टमी है सही अर्थों में गुरुमुख ही वास्तविक जन्माष्टमी मनाते हैं परमात्मा का दर्शन कर जीवन सफल बनातें हैं।



## शुभ भण्डारा 2जून

सबको विदित है कि आज शुभ भण्डारे का पावन दिवस है जो कि हमारे परम आराध्यदेव श्री परमहँस अद्वैत मत के शाश्वत ज्योतिस्सतम्भ श्री श्री 108 श्री परमहँस सतगुरुदेव श्री चौथी पादशाही जी की पुण्य समृति में प्रति वर्ष 2 जून को बड़ी श्रद्धा से मनाया जाता है।

गुरुवाणी का वाक है---।

जन्म मरण दोऊ में नहीं जन पर उपकारी आये।
जिया दान दै भक्ति लायन हरि सूँ लैन मिलाये।।

सन्त महापुरुष कुल मालिक जीवों पर उपकार करने के लिये अपनी ही श्री मौज से निजधाम को लौट जाते हैं। जीवों को भक्ति का दान देकर उन्हें अपने निजस्वरूप में मिलाना ही उनका मिशन होता है। श्रुति समृति आदि ग्रन्थों में और सन्तों ने सतगुरु को पारब्रह्म परमेश्वर कहकर सम्बोधित किया है।

गुर्रू ब्रह्मा गुर्रू विष्णुः गुर्रूदेवो महेश्वराः।।
गुर्रू साक्षात परंब्रह्म तसमै श्री गुरुवे नमः।।

फकीरों का भी कथन है---

आप से कहनी मुझे इक बात है।मुर्शिदे कामिल खुदा की ही जात है।
गुमशुदा रूहों की राहनुमाई के लिये।
तालिबाने हक की मन्ज़िल तक रसाई के लिये।
वो खुद आता ही रहा है आता ही रहेगा।
ये आज की नहीं चली आई अजल से ये बात है।।

फरमाते हैं कि कामिल मुर्शिद,पूर्णसतगुरु परमात्मा का ही सगुण साकार

रूप होते हैं।गुमशुदा रूहों की राहनुमाई के लियेअर्थात जो रूहेंअपनेअंशी परमात्मा से जन्मों जन्म से बिछुड़ कर संसार के मोह माया के अन्धकार में भटक रही हैं। दुःखी और परेशान हैं और सच्चे सुख और परमानन्द को प्राप्त करना चाहती हैं ऐसी संस्कारी रूहों पर जब परमात्मा को रहम आता है तो उन्हें सन्मार्ग दर्शाने के लिये उनकी राहनुमाई करने के लिये, उन्हें मन्ज़िल तक पहुँचाने के लिये सन्त सतगुरु के रूप में प्रकट होकर भक्ति और ज्ञान की रोशनी प्रदान करते हैं। जिस प्रकारअन्धेरे में यात्रा करता हुआ व्यक्ति सुरक्षित अपनी मन्ज़िल तक नहीं पहुँच सकता उसे हमेशा तक्लीफ और ठोकरों का ही सामना करना पड़ता है। अगर उसे रोशनी प्राप्त हो जाये तो वह बेखटकेअपनी मन्ज़िले मकसूद पर आसानी से पहुँच सकता है। सन्त सतपुरुषों को इसीलिये ज्योतिस्सतम्भ कहा जाता है। ज्योतिस्सतम्भ का अर्थ होता है रोशनी की मीनार। वे अपने आदर्शमयी जीवन से और अपने वचनों की रोशनी द्वारा सही रास्ता दिखलाते हैं। संसार में प्रकट होकर आदर्शमयी जीवन प्रस्तुत करते हैं ताकि उनकेअनुसार चल के जीव अपनी मंज़िले मकसूद पर आसानी से पहुँच सके। क्योंकि जिस तरह महापुरूष जीवन में कार्यवाही करते हैं जैसा आचरण करते हैं उनके अनुसार ही संसार के सभी जीव आचरण करते हैं। भगवान श्री कृष्ण जी ने गीता में अर्जुन के प्रति फरमाया है--

आलमें फानी में गो मुझको बर्रियत है सदा।।
फिर भी ऐ अर्जुन मैं अपना फर्ज़ करता हूं अदा।।
होशियारी से न लूँ मैं नाम ऐ अर्ज़ुन अगर।।
चलते रहेंगे हमेशा लोग मेरी राह पर।।



हे अर्ज़ुन यद्यपि मुझे तीनों लोकों में ऐसा कुछ भी अप्राप्य नहीं है फिर मैं अपने कर्तव्य को करता हूँ। श्री चौथी पातशाही जी महाराज जी केआदर्शमयी जीवन का वर्णन उनकी जीवन झलकियों में मिलता है कि किस प्रकारअपने इष्टदेव सतगुरु की श्री आज्ञा और मौज अनुसार जीवन को ढालकर सतगुरु की प्रसन्नता हासिल कर अपने मालिक के धाम तक रसाई हो सकती है। कालाबाग की जमीन जो कि अन्य सेवक धन की कमी तथाअन्य साधन सुगम न होने के कारण खरीदने में असफल रहे लेकिन आपने यथासम्भव धन एकत्र करकेश्री मौज को पूरा करके सतगुरुदेव जी की प्रसन्नता प्राप्त की।

एक बार रात्रि में विश्राम के समय आपने श्री सतगुरुदेव जी से विनय की कि प्रभो श्री चरण कमल दबाने की सेवा का सौभाग्य प्रदान कीजिए। श्री गुरु महाराज जी ने फरमाया क्या हम जो भी सेवा बताएं आप करेंगे? आपने विनय की प्रभो कृपा कीआवश्यकता है। श्री सतगुरुदेव महाराज जी ने फरमाया एक हाथ ऊंचा करो आपने वचनों का पालन किया। फिर फरमाया दोनों हाथ ऊँचा करो आप श्री आज्ञानुसार दोनो हाथ ऊँचा करके खड़े थे श्री गुरुमहाराज जी ने करवट बदलकर नेत्र मूँद लिये। रात्रि भरआप दोनों हाथ ऊँचे किये हुये श्रीदर्शन का अमृत पान करते रहे। श्री महाराज जी आपकी अतुल श्रद्धा और प्रेम को देखकर अति प्रसन्न हुये। प्रेम विभोर होकर आपके हाथों को अपने सुकोमल कर कमलों में लेकर फरमाया तुम्हारी महानता के अनुरूप तुम्हारें गुण भी उच्च कोटि के हैं। वे सदा आपको देखते ही प्रफुल्लित हो जाते थे कई बार उन्होंने सबके सामने ये प्रवचन फरमाये

कि आप हमारे दिल के टुकड़े हैं। एक बार श्री सतगुरु देव जी ने लक्की मरवत में भण्डारा करवाया। इस भण्डारे की पूर्ण धनराशि की सेवा आपके ज़िम्मे लगाई।आपने श्री आज्ञा को शिरोधार्य कर इस कार्य को भी पूर्ण रूप से सम्पन्न किया। वैसे तो महापुरुष सर्वसम्पदाओं के मालिक होते हैं। परन्तु वे संसार के सन्मुख एकआदर्श स्थापित करने के लिये उसी अनुरूप लीलाएं करते हैं। इस भण्डारे के सम्पूर्ण होने पर श्री सतगुरुदेव महाराज जी ने अपनी निजी मौज में आकरआपसे पूछा हम आप पर अत्यधिक प्रसन्न हैं आज कुछ माँगना हो तो माँग लो।हम देने को तैयार हैं। आपने विनय की कि प्रभो केवल आपके श्री चरण कमलों की भक्ति की अभिलाषा है। फरमाया कि ठीक है यह दोहा पढ़ो।

भक्ति दान मोहे दीजिए गुरुदेवन के देव।
और नहीं कुछ चाहिए निशदिन तुम्हरी सेव।।

आपने इसे तीन बार पढ़ा पुनः प्रवचन हुए ऐसा ही होगा। आपने तो श्री आज्ञानुसार एक ही भण्डारा किया।अब आपकी पुण्य समृति में प्रति वर्ष सारे संसार में भण्डारा आयोजित किया जाता है। आपकी पुण्य समृति में पर्व का नाम ही शुभ भण्डारा कहलाता है। आपके प्रेम,सेवा,त्याग, सच्चाई, गुरुभक्ति, आज्ञापालन,त्याग,तपस्या आदि पूर्ण जीवन के यदि एकअंग को लेकर भी कोईआचरण करे तो निश्चित ही सतगुरुदेव जी की प्रसन्नता हासिल कर लोक परलोक संवार सकता है। गुरुमुखों हमें महापुरुषों के आदर्शमयी जीवन से प्रेरणा लेकर उनके वचनों अनुसार अपने जीवन को ढालते हुए श्रीसतगुरुदेव जी की प्रसन्नता हासिल करके अपना लोक परलोक सँवारना है।



शुभ भण्डारा 2 जून (2)

सन्त महापुरुष कुल मालिक जीवों को सन्मार्ग दर्शाने के लिये उन्हें वचनों की सच्ची रोशनी प्रदान करने के लिये संसार में प्रकट हुआ करते हैं। जैसे कहा भी है--

ये दुनियाँ भटक रही है ज़ुल्मों जहालत में।
फक्त गुरु की सोहबत है रोशनी के लिये।
खुदा को भटके हुये जीवों पर जब रहम आया।
गुरु के रूप में वो आया राहबरी के लिये।।

जब संसारी जीवों को मोह माया केअज्ञान केअन्धकार में भटक कर दुःखी और संतप्त देखते हैं तो वह परमात्मा ही उन्हें सन्मार्ग दर्शाने के लिये उनकी राहनुमाई करने के लिये उन्हें वचनों की सच्ची रोशनी प्रदान करने के लिये ही सतगुरु के रूप में प्रकट होते हैं। उन वचनों की रोशनी में चल कर जीव अपनी मन्ज़िले मकसूद पर आसानी से पहुँच सकता है।अकसर आप श्री मुख से वचन फरमाया करते थे कि जो गुरुमुख प्रेमी सेवा में भाग लेकर हित चित से सेवा करते हैं उनके समान त्रैलोकी में बढ़कर कोई नहीं है क्योंकि गुरुदरबार की सेवा बड़े पुण्य जन्मों की कमाई से प्राप्त होती है।

गुरु की सेवा चाकरी करिए मन चित लाय।
कहें कबीर निज तरन को नाहीं और उपाय।।
ज्ञान ध्यान और योग जप गुरु सेवा सम नाहिं।
भक्ति मुक्ति और परमपद सब गुरु सेवा माहिं।।

सतगुरु की सेवा टहल आज्ञानुसार मन चित लगाकर करनी चाहिए।

क्योंकि भवसागर से तरने के लिये इससे उत्तम साधन अन्य नहीं है।ज्ञान ध्यान योग जप तप जितने भी साधन हैं ये गुरु सेवा की समानता नहीं कर सकते जो निष्काम भाव से सतगुरु की सेवा करता है उसे भक्ति मुक्ति और परमपद सहज में ही प्राप्त हो जाते हैं। सेवक बनने में बहुत सुख है सेवक भाव से प्रत्येक सेवा को करना चाहिए चाहे वह कोई भी सेवा क्यों न हो दरबार की सफाई करने की सेवा,दरबार के प्रबन्धक बनकर सेवा करना,या श्रीचरणों की निजी सेवा करना इन सबमें से कोई भी सेवा श्रीआज्ञानुसार मिल जाये उसेअत्यन्त श्रद्धा एवं विश्वास से दिल लगाकर करनी चाहिए। सेवक के दिल में अहंकार का स्थान नहीं होना चाहिए। क्योंकि जब तक सेवक अहं को नहीं मिटा देता तब तक कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। स्वयं को मिटाना पड़ता है।

मिटा दे अपनी हस्ती को अगर कुछ मर्तबा चाहे।
कि दाना खाक में मिलकर गुले गुल्ज़ार होता है।।

ऐ जीव यदि तू कुछ पाना चाहता है तो अपने आपको मिटा दे क्योंकि बीज मिट्टी में जब पूर्ण रूप से अपने आप को मिटा देता है तभी वह पौधा बन कर फलता फूलता है यदि कुछ बनने की अभिलाषा है तो स्वयं को मिटा देअर्थात अभिमान को त्याग दे। अहंकार जीव की जन्मों जन्मों की कमाई को एक क्षण में नष्ट कर देता है।सतगुरु चाहे कितनी भी दात बख्शें परन्तु सेवक को सदा विनम्र रहना चाहिए। सादगी से साधारण जीवन व्यतीत करना चाहिए।आपने जो भी श्री वचन फरमाये उन्हें यथार्थ रूप में आचरण कर सबके सामने आदर्श प्रस्तुत किया।आप में विनम्रता,गुरुभक्ति,सेवा का अदम्य प्रमाण,सच्चाई त्याग,तपस्या,आपके



जीवन झलकियों में सपष्ट झलकते थे। आप ये भी वचन फरमाते थे कि जैसे पक्षी दो परों से उड़ता है मनुष्य दो पाँवों से चलता है पक्षी का यदि एक पँख काट दिया जाये तो वह उड़ नहीं सकता मनुष्य को एक पाँव से चलना दुष्कर हो जाता है।

इसी प्रकार ही जीव रूपी पक्षी के भी दो पँख हैं सेवा और भजनअभ्यास। इन दोनों परों से ही जीव ब्रह्माण्ड देश में पहुंच सकता है अतः गुरुमुखों के लिये सेवा के साथ साथ भजन अभ्यास करना भी अति आवश्यक है। ये भी वचन अकसर फरमाते थे कि---। श्री दरबार में शरणागति प्राप्त करना उच्च भाग्यों की निशानी है जिन गुरुमुखों प्रेमियों को अपने जीवन के कल्याण की अभिलाषा है वह इस चार बातों को नित्यप्रति हर समय हर घड़ी स्मरण रखा करे जो इन्हें अपने आचरण में लायेगा निश्चय ही उसका कल्याण होगा।

1.दरबार की हितचिन्ता(खैरख्वाही) 2.सच्चाई3.सुमति 4.समय की कद्र

1.दरबार की हित चिन्ता--दरबार को अपना घर समझो जिस साधनों से तुम्हारी भक्ति सुदृढ़ हो उन्हे अपनाओ जिस कार्य के करने से दरबार की हानि हो वह तुम्हारी हानि है उस कार्य को कदापि न करो।

2.सच्चाई-जहाँ तक हो सकेअपने जीवन को सत्य के साँचे में ढालो यदि तुम्हारा जीवनआचरण रूप में ढला होगा तो तुम्हारा हृदय शुद्ध होकर शब्द में लगेगा। इसलिये मुख से सदा सत्य वचन कहो सत्य का व्यवहार करो।

सच्चाई को रखो हमेंशा अजीज़ सच्चाई बराबर नहीं कोई चीज़।
सच्चाई से होती है दिल की सफाई सच्चाई बुज़ुर्गों ने है आज़माई।।

3.सुमति--सुमति से रहो यही दुनियां के सामने एक आदर्श दिखाओ। जहाँ सुमति हो वहाँ ईर्ष्या वैर विरोध कुछ नहीं रहता। वहां तो प्रेम ही प्रेम आनन्द ही आनन्द हर समय बरसता है।

जहाँ सुमति वहाँ सम्पत्ति नाना। जहाँ कुमति वहाँ विपति निधाना।।

आप सब जानते हैं कि लंका के राजा रावण का क्या हाल हुआ। वह बहुत विद्वान पण्डित था परन्तु वहां जब कुमति ने डेरे डाल लिये तो सोने की लंका जलकर राख हो गई कुमति से हृदय में अशान्ति चिन्ता कल्पना पैदा हो जाती है।और सुमति से सुख शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होती है।

4.समय की कदर--समय का सदुपयोग करो तुम्हें मालूम होना चाहिये कि गुरुमुखों का समय कितना कीमती है। इस मनुष्य जन्म का मिलना करोड़ों जन्मों के पुण्यों का फल है। फिर इस मानव जन्म के एक एक स्वाँस का मूल्य तीन लोक चौदह भुवन दो जहान से भी बढ़कर है अब सोचना ये है कि जीवन का एक एक स्वाँस कैसे जा रहा है और कैसे जाना चाहिए। गुरुमुख का प्रत्येक स्वाँस सेवा भजन सत्संग में लगना चाहिए। यदि इन तीनों कार्यों से समय शेष हो तो आराम करो जिससे शरीर निरोग रहे और इन कार्यों को करने में भी सफलता मिले। व्यर्थ की निन्दा चुगली में समय व्यर्थ न गँवाओ किसी के अवगुण न देखो। हृदय में सतगुरु का ध्यान बसाओ।अतएव इन चारों बातों को आचरण रूप में लाना कथनी रूप से नहीं करनी रूप में। जिससे गुरुमुख की ज़िन्दगी सुख शान्ति आनन्द से व्यतीत होती है सतगुरु की प्रसन्नता हासिल होती है लोक परलोक संवर जाता है।अतः गुरुमुखों हमारा



कर्तव्य है कि इन वचनों अनुसार अपने जीवन को ढ़ालते हुए अपने जीवन को सुखमयी बनाना है सतगुरु की प्रसन्नता हासिल करके अपना परलोक भी सँवारना है।।

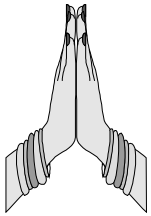

## मकर संक्रान्ति (माघी)

मकर संक्रान्ति या माघी का पर्व एक धार्मिक पर्व है। आज के दिन संसारी प्राणी(धार्मिकव्यक्ति)संसार के किसी न किसी पावन तीर्थ पर जाकर वहाँ पर स्थित किसी पवित्र नदी या किसी पावन सरोवर के तट पर स्नान करते हैं। इन तीर्थ स्थानों पर,पवित्र नदियों या सरोवर में स्नान करने का बड़ा महत्व बतलाया गया है।आम श्रद्धालु व्यक्तियों के हृदय में ये भावना निहित होती है कि इनमें स्नान करने से पाप कर्मों का नाश होता है और पुण्य की प्राप्ति होती है। वास्तव में अगर देखा जाये तो इन तीर्थ स्थानों पर जाने का तात्पर्य ये है कि वहाँ जाकर सन्त महापुरुषों के श्रीदर्शन और उनके सत्संग का लाभ प्राप्त करेऔर उनसे नाम दीक्षा लेकर उनके वचनानुसार अपने जीवन को ढालकर अपनी जीवात्मा का कल्याण करे।

भारतवर्ष में तीर्थ स्थानअनेक हैं किन्तु उन सभी तीर्थों में अड़सठ तीर्थ ही प्रमुख गिने गये हैं। चार धाम, सात पुरियाँ, बारह ज्योतिर्लिंग, बावन पीठ इत्यादि। इन तीर्थों के इतिहास को पढ़ने सुनने से यही विदित होता है कि उन स्थानों में पूर्वकाल में युग युग में समय समय पर किसी न किसी उच्चकोटि के सन्तमहापुरुषों और अवतारी विभूतियों ने निवास किया है और उन पावन तीर्थों का निर्माण किया और उस समय के सेवकों ने सेवा का लाभ प्राप्त करके अपने जीवन को धन्य बनाया है। इन पावन तीर्थों पर सन्त महापुरुषों के चरण कमल पड़े हैं और उन्होंने वहाँ विराजमान हो कर भक्ति व सतसंग की पावन गंगा यमुना बहाई जिसमें श्रद्धालु व भक्त जनों नें,जिज्ञासुओं ने उसमें मज्जन करके अपनी



जीवात्मा का कल्याण किया। इसलिये इन तीर्थों का महत्व केवल सन्त महापुरुषों के ही कारण है।अयोध्या,रामेश्वर धाम का महत्व भगवान श्री राम जी के कारण,मथुरा वृन्दावन द्वारिका का महत्व भगवान श्री कृष्ण जी के कारण,अमृतसर का महत्व श्रीगुरु नानक देव जी के कारण और अन्य तीर्थों का महत्व भी किसी न किसी महापुरुषों के कारण ही है।

हर युग में महापुरुष जीवों के कल्याण के लिये इन महानतीर्थों का निर्माण करते हैं इसी परम्परा केअनुसार ही आज के युग में जीवों के कल्याण के लिये प्रेमाभक्ति की दात बख्शिश करने के लिये श्री परमहँस अवतार श्री सतगुरुदेव दाता दयाल जी ने इन सभी तीर्थों के सिरमौर महातीर्थ, रूहानी व लासानी श्री आनन्दपुर दरबार की रचना की। श्री आनन्दपुर दरबार में पावन श्री आनन्दसर और श्री प्रयागधाम में श्री प्रयागसर का निर्माण किया है। जिसमें प्रेमी व श्रद्धालु जन मज्जन करके औरअपने इष्टदेव सतगुरु दातादयाल जी के पावन श्रीदर्शन करके कृत्य कृत्य हो रहे हैं। सभी गुरुमुखों ने श्री गुरुमहाराज जी के मुखारविन्द से कई बार श्रवण किया है कि श्री आनन्दपुर दरबार जैसा त्रैलोकी में भी कोई दरबार नहीं है। यह धुर दरगाही रचना है ये अटल सत्य है श्री आनन्दपुर दरबार की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। इसकी महानता केवल इसीलिये है कि यहाँ साक्षात सन्त सतगुरु निवास करते हैं।

विषय विकारों में लीन रहने वालेऔरअनेक प्रकार के पाप कर्म करने वाले साधारण प्राणी तीर्थ स्थानों पर जाकर अपने पापों की मैल धोते हैं। स्नान करके पापों की मैल वहीं छोड़ आते हैं। तो उससे तीथ

धाम भी मैले हो जाते हैं लेकिन जब सन्त महापुरुषों के चरण कमल उन तीर्थों में पड़ते हैं तो वही तीर्थ स्थान पवित्र बन जाते हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। तीर्थ स्थान भी सन्त महापुरुषों के चरण धूलि की आकांक्षा करते हैं जैसे कि गुरुवाणी में कथन है--

गंगा जमुना गोदावरी सरसुती, ते करहिं उदमु धूरि साधू की तांईं।

किलविख मैलु,भरे परे हमरे बीच,हमरी मैल साधु की धूरि गँवाईं।।

अर्थात गंगा यमुना सरस्वतीआदि पवित्र नदियाँ सन्त महापुरुषों की चरण धूलि को पाने के लिये प्रयत्नशील रहती हैं उनका कथन है कि पापरूपी मैल से भरे हुये जीव जब हमारे भीतर स्नान करते हैं तो हमें मैला कर देते हैं हमारी मैल सन्त सतपुरुषों की चरण धुलि ही दूर करती है।

हमारे परमइष्टदेव सन्तों के सिरमौर जिनके पावन श्रीचरण कमलों में सभी अड़सठ तीर्थ निवास करते हैं श्रीहुज़ूर सतगुरु दाता दयाल जी सन्1994 में हरिद्वार में हर की पौड़ी गंगा के तट पर पधारे थे। कुछ सन्त महात्मा व भक्त जन साथ थे। श्री गुरुमहाराज जी ने गंगा के जल में चरण छुआये और सन्त महात्माजन व भक्तजन श्री आज्ञा प्राप्त कर गंगा जी में स्नान करने लगे ये सब कौतुक वहीं पर एक साधु महात्मा जी देख रहे थे। सोचने लगे कि ये महापुरुष कौन हैं? बाकी सब सन्त महात्माओं ने तो स्नान किया है और इन महापुरुषों ने केवल गंगा जी में चरण ही छुआये हैं और शुन्य में आशीर्वाद दे रहे हैं। उसके दिल में उत्सुकता हुई,यह जिज्ञासा हुई कि जानना चाहिए कि ये महापुरुष कौन हैं? वह श्री गुरु महाराज जी को दूर से ही प्रणाम करता हुआ श्री चरणों के नज़दीक होने का प्रयत्न करने लगा। कुछ पूछने की उसकी हिम्मत न



हो रही थी लेकिन अन्तर्यामी भगवान श्री सतगुरुदेव जी ने सहज ही पूछ लिया कि कहां रहते हो? उसने उत्तर दिया कि हरिद्वार में। श्री प्रभु ने पूछा कितने वर्ष से रहते हो? उसने उत्तर दिया सोलह वर्ष से। अगला प्रश्न किया कि हरिद्वार में सोलह वर्ष से रहते हो कभी हरि के दर्शन किये हैं?वह साधु एक बार तो सकपका गया कि आज तक तो ऐसा प्रश्न किसी ने नहीं किया। लेकिन श्री प्रभु की प्रेरणा से उसके मुख से स्वतः ये शब्द निकले कि प्रभो पहले तो कभी हरि के दर्शन नहीं किये परन्तु आज साक्षात प्रभु श्री हरि के दर्शन कर रहा हूँ। ये मेरा सौभाग्य है कि श्री दर्शन करके मेरा जीवन सफल हो गया है।

आप हम सभी गुरुमुख सौभाग्यशाली हैं कि तीर्थों के तीर्थ महातीर्थ श्री आनन्दपुर दरबार में निवास,श्री सतगुरुदेव दाता दयाल जी की चरण शरण प्राप्त हुई और श्री दरबार की सेवा,सत्संग,भक्ति नाम की गंगा में नित प्रति मज्जन करके अपने जीवन को धन्य बना रहे हैं। गुरुमुखों की रोज ही मकर संक्रान्ति है। ऐसी मकर संक्रान्ति की सभी गुरुमुखों को लाखों लाख मुबारिक वाद हो। हमारी ये शुभ कामना है कि रूहानी व लासानी श्री आनन्दपुर दरबार युगों युगान्तरों तक कायम रहे दिनों दिन फूले फले और प्रेमी श्रद्धालु जन इसमें आकर भक्ति प्रेम व सतसंग की गंगा में स्नान कर अपने जन्म जन्मान्तरों की मैल को धोकर अपनी आत्मा को स्वच्छ व निर्मल करके अपने जीवन को सफल करते रहें।

## मकर संक्रान्ति (2)

तीर्थ तीन प्रकार के कहे गये हैं। पहला स्थावर तीर्थ,दूसरा जंगम तीर्थ, तीसरा घट का तीर्थ। स्थावर तीर्थ जैसा कि पहले वर्णन कर चुके हैं कि इन तीर्थों का निर्माण युग युग में समय समय पर सन्त महापुरुषों ईश्वरीय महान विभुतियों के द्वारा होता है। वहाँ उन्होंने अनुपम लीलाएं की होती हैं उस समय जिज्ञासुओं और श्रद्धालुओं ने सतसंग,नाम प्रभु भक्ति की गंगा यमुना में स्नान कर अपने जन्मों के पापों की मैल को धोकर आत्मा को पवित्र निर्मल करके अपने जीवन को सफल बनाया होता है।कालान्तर में ये तीर्थ महान तीर्थ कहलाये इन्हें स्थावर तीर्थ कहा जाता है। दूसरे होते हैं जंगम तीर्थ। जंगम काअर्थ होता है चलता फिरता तीर्थ।चलने फिरने वाले तीर्थ स्वयं सन्त महापुरुष होते हैं जो घर बैठे ही जिज्ञासुओं एवं श्रद्धालुओं को स्वाभाविक हीअपने स्पर्श से,सम्भाषण से, सत्संग से,पवित्र एवं निर्मल किया करते हैं। इन्हें चलते फिरते तीर्थराज कहा जाता है। सन्त तुलसीदास जी ने रामायण में वर्णन किया है कि-।

मुदमंगलमय सन्त समाजु। जो जग जंगम तीर्थ राजु।।
राम भक्ति जहाँ सुरसरि धारा। सरसई ब्रह्म विचार प्रचारा।
विधि निषेधमय कलिमल हरणी। करम कथा रविनन्दनी बरणी।।

सन्तों का समाज,सन्त समागम,कल्याणकारी और मंगलकारी है। खुशी का दाता है जो कि चलता फिरता तीर्थराज है। जिस प्रकार प्रयाग राज में तीन नदियों का संगम है इसी प्रकार इन जंगम तीर्थ अर्थात सन्त महापुरुषों के चरणों में तीनों नदियाँ प्रवाहित रहती हैं। सन्त तुलसीदास जी कथन करते हैं जो प्रभु भक्ति की धारा है वह मानों गंगा का धारा है।



रामभक्ति जहाँ सुरसरी धारा और जो ब्रह्म के विचार का प्रचार है अर्थात सतसंग की धारा है वह मानों सरस्वती की धारा है।सरसई ब्रह्म विचार प्रचारा। और जो शुभ अशुभ कर्मों के फल को देने वाली पाप कर्मों को हरने वाली जो कर्म कथा है वही यमुना की धारा कही गई है। कर्म कथा रविनन्दनी बरणी।अर्थात् इन तीनों नदियों का संगम महापुरुषों के चरणों में रहता है इसलिये वे तीर्थराज कहेजाते हैं।तीसरा तीर्थ है घट का तीर्थ। जिसे गुप्त तीर्थ भी कहते हैं। जिसका आम जीवों को पता नहीं होता है उसका भेद भी इन्हीं जंगम तीर्थअर्थात महापुरुषों द्वारा ही मालूम होता है वही इस घट के तीर्थ का भेद बताते हैं स्नान करने का नियम हमेंस्थावर तीर्थों से मिलाता है स्थावर तीर्थ हमें जंगम तीर्थ से मिलाते हैं और जंगम तीर्थ से हमें घट के तीर्थ का भेद मिलता है। सतपुरुषों का कथन हैः-

ईड़ा पिंगला सुषुम्ना तीन बसें इक ठाईं।।
वेणी संगम प्रियाग मन मज्जन करके तिथाईं।।

ये मानव शरीर ब्रह्माण्ड का एक नमूना है जो कुछ हम सृष्टि में देखते हैं वह सब हमारे इस शरीर में विद्यमान है।

जो पिण्डे सो ब्रह्माण्डे। पीपा प्रणव तत्त है सतगुरु होये लखावे।।

भारतवर्ष में जैसे तीन नदियाँ गंगायमुना सरस्वती इलाहबाद में प्रयागराज में मिलती हैं। जिस प्रकार गंगा और यमुना की धारा तो प्रकट रूप में नज़रआती हैं परन्तु सरस्वती गुप्त रूप से श्री प्रयागराज में जाकर मिली हैं इसी प्रकार हमारे शरीर में बहत्तर हज़ार नाड़ियां मेरूदण्ड में गतिमान रहती हैं। ईड़ा मेरूदण्ड के बाईं ओर पिंगला दाईं ओर हैऔर सुषुम्ना इन के बीच से होकर स्थित है। ये तीनों नाड़ियां भृकुटि में आकर मिल गई

हैं। हमारी नासिका के दो छिद्रों में से स्वाँस प्रवाहित रहता है। ढाई ढाई घड़ी अर्थात एक एक घन्टा क्रमशः इनमें स्वांस चलता है। बाईं ओर को जिसे ईड़ा का नाम दिया गया है इसेशास्त्रों ने गंगा की धारा कहा है।दायें स्वर को जिसे पिंगला कहा जाता है इसे यमुना की धारा कहा गया है। जब दोनों स्वर बराबर चलते हैं उसे सुषुम्ना कहा जाता है इसे सरस्वती की धारा कहा है। भृकुटि में इन तीनों का संगम होता है वहां जब सुरति सतगुरु के बताये शब्द के अभ्यास से उस संगम पर स्नान करती है तब आत्मा निर्मल और पवित्र हो जाती है।आत्मा के जन्म जन्मान्तरों के पाप कर्मों का नाश हो जाता है फिर वहाँ अपने मालिक का दर्शन करती है यही घट का तीर्थ है। बाहर के तीर्थों का स्नान घट के तीर्थ का इशारा है कि जीव स्थावर तीर्थ में जाकर जंगम तीर्थ से मिलकर घट के तीर्थ का भेद लेकर उसमें स्नान करे जिससे आत्मा के जन्म जन्मान्तरों के पाप धुलकर आत्मा निर्मल एवं पवित्र हो कर मालिक के दर्शन कर उससे मिल सके जो कि जीवन काअसली ध्येय है। घट के तीर्थ का स्नान ही सही अर्थों में मकर संक्रान्ति का स्नान है।

हम सब गुरुमुख सौभाग्यशाली हैं जिन्हें स्थावर तीर्थों के सिरमौर श्रीआनन्दपुर दरबार मिला जंगम तीर्थ साक्षात सतगुरु की प्राप्ति हुईऔर उनकी कृपा से घट के तीर्थ का भेद व युक्ति प्राप्त हुई है अब हमारा ये कर्तव्य है कि इस अवसर का पूरा पूरा लाभ प्राप्त करके घट के तीर्थ में मज्जन कर अपने जन्म जन्मान्तरों के पापों को धोकरआत्मा को पवित्र व निर्मल बनाकर मालिक के दर्शन करके जीवन को सफल बनायें यही सच्ची मकर संक्रान्ति है।



## मकर संक्रान्ति (3)

संसार में जितने भी पर्व या त्यौहार मनाये जाते हैं वो अपने आप में कुछ अर्थ रखते हैं उनमें कुछ न कुछ रहस्य छिपा होता है उन पर्व या त्यौहारों के मनाने में कोई न कोई भावना निहित होती है। मकर संक्रान्ति का पर्व क्यों मनाया जाता है इसका अर्थ क्या है इसके मनाने में कौन सी भावनाएं निहित हैं?

सदशास्त्रों व सदग्रन्थों के अनुसार हम जो आकाश में असंख्य सितारे देखते हैं इन असंख्य तारों को प्राचीन ऋषि मुनि,सन्त महापुरुषों और विद्वानों ने बारह भागों में विभक्त किया है उनविभक्त किये हुये तारों की जो जोआकृति शक्ल व सूरत बनी उसी के आधार पर उन तारों के समूह का नाम रख दिया गया। जिन्हें हम बारहराशियों के नाम से जानते हैं। ये बारह राशियाँ क्रमशः मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह,कन्या,तुला, वृश्चिक,धनु,मकर,कुम्भ, मीन कही गई जाती हैं। सूर्य जब एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता हैअर्थात संक्रमण करता है तो उसी राशि के नाम से वह संक्रान्ति कहलाती है चूंकि सूर्य एक महीने में एक राशि से दूसरी राशि में संक्रमण कर लेता है इसलिये वर्ष भर में बारहसंक्रान्तियाँ हुईं। जब सूर्य मकरराशि में संक्रमण करता है तो वह मकर संक्रान्ति कहलाती है। अब देखना ये है कि शेष संक्रान्तियों में से केवल मकर संक्रान्ति का ही इतना महत्व क्यों है। सूर्य दो दिशाओंमें गतिमान रहता है छः महीने दक्षिण दिशा की ओर गति करता है तो उसे सूर्य का दक्षिणायन स्वरूप कहते हैंऔर जिन छः महीनों में सूर्य उत्तर दिशा की ओर गतिमान रहता है उसे सूर्य का उत्तरायण स्वरूप कहते हैं।

सदशास्त्रों के अनुसार सूर्य की दक्षिणायन अवस्था को अशुभ और अपवित्र माना गया है क्योंकि वह धूम मार्ग है अन्धकारमय है। उतरायण अवस्था को शुभ और पवित्र माना गया है वह ज्योतिमय,प्रकाशमयी मार्ग है। मकर संक्रान्ति के दिन सूर्य भूमध्य रेखा को पार करके मकर रेखा की ओर अर्थात उत्तर की ओर बढ़ने लगता है इसलिये उसे उत्तरायण कहते हैं इसके पहले वह दक्षिणायन होता है। सदग्रन्थों के अनुसार जो संसारी जीव शुभ या अशुभ कर्म करने वाले दक्षिणायन के समय देह त्याग करते हैं वे अधोगति को प्राप्त होते हैं और जो उतरायण के समय देह त्याग करते हैं वे उत्तम गति को प्राप्त होते हैं इसका प्रत्यक्ष प्रमाण महाभारत केअन्दर मिलता है जब कौरवों और पाण्डवों का युद्ध हो रहा था युद्ध के दसवें दिन भीष्मपितामह अर्जुन के बाणों से आहत होकर शर शैय्या पर पड़े थे उस समय दक्षिणायन का समय था। चूंकि भीष्मपितामह को इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त था इसलिये वे उतरायण की प्रतीक्षा में 49 दिन शर शैय्या पर पड़े रहे। जब सूर्य मकर संक्रान्ति के दिन उतरायण हुआ तब उन्होने देह का त्याग किया जिसके फलस्वरूप वह ब्रह्मलोक को प्राप्त हुए।

उतरायन और दक्षिणायन से मकर संक्रान्ति मनाने का क्या तात्पर्य है? भगवान श्री कृष्ण ने गीता के आठवें अध्याय के23से28वें श्लोक तक इन उतरायणऔर दक्षिणायण स्वरूप के भेद का वर्णन करते हुयेअर्जुन के प्रति फरमाया है कि हे अर्जुन जो शुभ और अशुभ कर्म करने वाले हैं वे अपने शुभ एवं अशुभ कर्मों के फलस्वरूप अधोगति और उत्तम गति को प्राप्त होते हैं। और शुभ कर्म करने वाले देह त्याग



के पश्चात उत्तरायण मार्ग से गतिमान होकर उत्तम लोकों को प्राप्त करते हैं। पितृलोक इत्यादि लोकों से होकर क्रमशः ब्रह्मलोक को प्राप्त करते हैं। इस परअर्जुन ने शंका व्यक्त की है कि हे प्रभो जो शुभ कर्म करने वाले हैं वे अकसर दक्षिणायन में और अशुभ कर्म करने वाले उत्तरायण में देह त्याग करते हुये देखे जाते हैं। ऐसे जीवों की क्या गति होती है?इस पर भगवान श्रीकृष्ण ने शंका का समाधान करते हुये फरमाया कि विश्व नियन्ता की तरफ से दोनों दिशाओं के दो देवता नियुक्त किये गये हैं। दक्षिण दिशा का दक्षिणाभिमानी देवताऔर उत्तर दिशा का उत्तराभिमानी देवता है। शुभ कर्म करने वाले अगर दक्षिणायन में देह त्याग करते हैं तो वह उत्तरायणआने तक दक्षिणायन देवता के अधिकार में रहते हैं उत्तराणन आने पर उतराभिमानी देवता के सुपुर्द कर दिये जाते हैं। जिससे वे उत्तम गति को प्राप्त कर लेते हैं। इसी प्रकार अशुभ कर्म करने वाले उतरायण में देह त्याग करके पर उतरायण देवता के अधिकार में रहते हैं दक्षिणायन आने पर दक्षिणाभिमानी देवता के सुपुर्द कर दिये जाते हैं। जिससे वे अपने अशुभ कर्मों के फलस्वरूप अधोगति को प्राप्त होते हैं।

संसार के प्राणी अपनी मनमति के अनुसार या तो शुभ कर्म करेंगे या अशुभ कर्म। जिसके फलस्वरूप अपने पाप और पुण्य का उपभोग करके शेष बचे पाप और पुण्य का उपभोग करने के लिये फिर वापिस इस संसार में लौट आते हैं। इस प्रकार वे आवागमन के चक्र में फँसे रहते हैं। मोक्ष को प्राप्त नहीं होते।अर्थात संसार में सकाम कर्म करने वालों की गति इन दोनों मार्गों से होती है। इनकी गति ब्रह्मलोक तक ही

होती है। अपने कर्मों के फलस्वरूप इन्हें वापिस मृत्युलोक में लौटना पड़ता है। लेकिन जो सौभाग्य शाली जीव सत्पुरुषों की चरण शरण में आ जाते हैंऔर उनकी आज्ञा और मौज अनुसार निष्काम कर्म करते हैं उनका मार्ग दूसरा है वे इन दोनों मार्गों से होकर नहीं जाते क्योंकि उनका सम्बन्ध सतलोक के वासी सतपुरुष सतगुरु से हो जाता है। निष्काम कर्म करने के कारण सीधे सतलोक में वास करते हैं जिसे गीता में परमधाम कहा गया है उसे प्राप्त करते हैं। सकाम कर्म करने वालों को शुभ अशुभ कर्म करने के कारण उनका फल पाप पुण्य भुगतने के लिये देह धारण करना पड़ता है लेकिन जो निष्कामकर्म योगी हैं अर्थात गुरुमुख हैं जो सतगुरु की आज्ञा अनुसार सभी कार्य करते हैं और उन्हीं की प्रसन्नता के लिये उन्हीं के निमित्त कर्म करते हैं बल्कि ये भावना रखकर कर्म करते हैं कि इस शरीर द्वारा जो भी कार्य हो रहा है वह इष्टदेव सतगुरु ही कर रहे हैं उन्हीं की प्रेरणा से हो रहा है इसका कर्ता मैं नहीं हूँ अकर्तापन के भाव के कारण वह कर्म फल से छूट जाता है उसे देह धारण नहीं करना पड़ता जिसके फलस्वरूप वह आवागमन के चक्र से छूट कर परमात्मा को प्राप्त कर लेता है। गुरुमुखों की सारी कार्यवाही देखें तो वे आज्ञानुसार जो पाँचों नियम का पालन करते हैं उनमें गुरुमुख की कौन सी सासांरिक कामना होती है? श्री आरती पूजा करते हैं तो सतगुरु की प्रसन्नता के लिये,सुमिरण करते हैं तो उनकी खुशी के लिये, सेवा करते हैं तो उनकी प्रसन्नता के लिये, सतंसग दर्शन ध्यान आदि जो भी गुरुमुख कार्यवाही करते हैं केवल यही उनकी कामना या भावना होती है कि सतगुरु की प्रसन्नता हासिल हो



इसलिये गुरुमुख की सारी कार्यवाही निष्काम कर्म की ही कार्यवाही है। मकरसंक्रान्ति के दिन महापुरुषों ने जो स्नान का नियम निर्धारित किया है वह भी इसीलिये कि संसारी जीव इन तीर्थ स्थानों पर जाकर सतपुरुषों की शरण प्राप्त करे सकाम कर्म के मार्ग को त्याग कर निष्काम कर्म का मार्ग अपना कर सतगुरु की आज्ञानुसार उन्हीं की प्रसन्नता के लिये उन्ही के निमित्त कर्म करके अपनी आत्मा को सतलोक में पहुँचा कर मालिक के दर्शन करके उनसे एकाकार कर ले। यही मानुष जन्म का मकसद है सही अर्थों में यही मकर संक्रान्ति है।

## श्री गुरु पूर्णिमा या व्यास पूजा

श्री गुरु पूजा का पर्व एक महत्वपूर्ण और आध्यात्मिक पर्व है इसे श्री व्यास पूजा भी कहते हैं। संसार में आमतौर पर लोग ये समझते हैं कि द्वापरयुग के अन्त में प्रकट हुये महर्षि वेदव्यास जी के नाम पर ही श्री गुरुपूजा का पर्व श्रीव्यास पूजा रखा गया है लेकिन ये विचार सत्य नहीं है क्योंकि इतिहास कारों के अनुसार पुराणों में ब्रह्मा जी से लेकर महर्षि वेदव्यास जी तक अट्ठाईस व्यासों की परम्परा मिलती है अर्थात सतयुग से लेकर द्वापर के अन्त तक 28 व्यास हुये हैं। वेदव्यास जी 28वें व्यास हैं जिनका नाम कृष्णद्वैपायन था। कृष्ण इनका नाम था नदी के द्वीप में पैदा होने के कारण द्वैपायन कहलाये। इसलिये इनका नाम कृष्णद्वैपायन हुआ। इन्होंने ऋग्वेद का विस्तार करके उसको चार भागों में विभक्त करके अपने चारों शिष्यों को,पैल को ऋग्वेद,वैशम्पायन को यजुर्वेद,जैमिनी को सामवेद और सुमन्तु को अथर्ववेद का ज्ञान कराया। चार वेद बनाने और उनका ज्ञान कराने के कारण ये वेदव्यास कहलाये। चूँकि ये द्वापर केअन्त में हुये हैं इन से पहले भी सतयुग और त्रेतायुग में श्रीव्यास पूजा का पर्व मनाया जाता था। आदिकाल से ही शिष्य सतगुरु की पूजा अर्चना करता आया है इसलिये महर्षि वेदव्यास जी के नाम पर इस पर्व का नाम व्यास पूजा नहीं है। वि उपसर्ग के साथ अस धातु के लगने से व्यास होता है। व्यास का अर्थ होता है क्षेपण करने के फैंकने के विस्तार करने के, अलग अलग करने के। अर्थात जो सतऔर असत को अलगअलग करके जिज्ञासु के मन में बिठा दे उसे व्यास कहते हैं। गुरु शब्द का अर्थ भी अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला है।



''गु''का अर्थअन्धकार और''रू''का अर्थ प्रकाश कीओर ले जाने वाला अर्थात जो अपने शिष्य के हृदय में मोह माया के अज्ञान का अन्धकार दूर करके आत्मज्ञान का प्रकाश करा दे सत और असत का भेद समझा दे वह गुरु है,सतगुरु है। जिसके हर पल सुमिरण से,पूजा आराधना से,ध्यान से और जिसकी कृपा से जीव केअन्दर जीव भाव काफूर होकर ब्रह्म को प्राप्त कर ले ऐसे सतगुरु का नाम ही व्यास है। ऐसे सतगुरु की पूजा ही श्रीव्यास पूजा है।

ईश्वरीय महान विभूतियों सन्तमहापुरुषों ने हर युग में समय समय पर जीवों के उपकार के लिये संसार मेंअवतार लिया। उन महापुरुषों के अलौकिक गुणों की गरिमा महिमा गायन करने के लिये और उनके द्वारा किये गये महान उपकारों के लिये आभार प्रकट करने के लिये हर वर्ष संसार में जयन्तियाँ या पर्व मनाये जाते हैं। जैसे भगवान श्री राम जी के अवतरित दिवस पर रामनवमी,श्रीकृष्ण जन्माष्टमी,श्री गुरुनानक जयन्ति, बुद्ध पूर्णिमाआदि। उन महापुरुषों के चरणों में जनसमाज उनके उपकारों के प्रतिआभार प्रक्ट करने के लिये प्रति वर्ष निश्चित तिथी में भावभीनी श्रद्धाँजलि अर्पित करता है। इसी उद्देश्य से ही सतगुरु के द्वारा किये गये महान उपकारों और एहसानों के प्रति आभार प्रकट करने के लिये हर वर्ष श्री गुरु पूजा का पर्व बड़ी श्रद्धा से मनाया जाता है।

अनादि काल से ही ये मर्यादा चली आई है कि शिष्य अपने विद्या गुरु, कुल गुरु,दीक्षा गुरु और सतगुरु की पूजा निष्ठा से करता आया है। शिष्य के अन्दर सदशिक्षा,सदाचरण और शुभ विचारों को भरने वाला गुरु ही है और चौरासी से छुड़ाकर परमात्मा से मिलाने वाला

सतगुरु है।जब से जीव संसार में जन्म लेता है उसे जन्म से लेकर मृत्यु तक पूरे जीवन में पग पग पर गुरु की आवश्यकता होती है। यहाँ तक कि मृत्यु के उपरान्त भी परलोक में सतगुरु के बिना जीव की गति नहीं होती। गुरु बिन गत नहीं शाह बिना पत नहीं। चाहे कोई कितना ही बुद्धिमान है,चतुर है,सयाना है,विद्वान है,विद्वता को प्राप्त है वह सब कुछ अपने आप नहीं सीख गया। पैदा होते ही उसे किसी न किसी से चलना बोलना, खाना पहनना, यहां तक कि खेलना भी सीखना पड़ता है। उसे आप माँ बाप,भाई,बहन,मित्र,कुछ भी कह सकते हैं। बचपन से लेकर बड़े होने तक उसे कई तरह के शिक्षक अपनाने पड़ते हैं। कुछ बड़ा होने पर स्कूल में उसे हिन्दी अंग्रेज़ी,गणित,विज्ञान केअलगअलग शिक्षक मिले। कालेज में जाने पर उसे फिलासफी, कानून,इन्जिनियरिंग, डाक्टरी आदि के विद्याओं को ग्रहण करने के लिये कोई न कोई शिक्षक या गुरु की आवश्कता होती है तो आत्म ज्ञान को प्राप्त करने के लिये,परमात्मा की प्राप्ति को लिये क्या गुरु की आवश्यकता नही है? जिस परमात्मा का हमें पता ही नहीं है वह कैसा है कहां रहता है,कितनी दूर है,वह बिना सतगुरु की राहनुमाई के कैसे प्राप्त किया जा सकता है? गुरुबिन भवनिधि तरे न कोई। जे विरंची शंकर सम होई।।भले ही कोई ब्रह्मा और शिव की पदवी तक पहुँच जाये लेकिन सतगुरु के बिना भव से पार होना असम्भव है।

संसार में अब तक जितने भी ऋषि मुनि,सिद्धसाधक योगी भक्त इत्यादि हुये हैं उन्होने सतगुरु की शरण में आकर ही लाभ उठाया है और ऊंची पदवी को प्राप्त हुये और संसार में पुज्यनीय कहलाये। स्वामी



विवेक आनन्द जी पर रामकृष्ण जी की कृपा थी। शिवा जी पर समर्थ गुरु रामदास जी का हाथ था।अर्जुन के ऊपर भगवान श्री कृष्ण जी का अनुग्रह था। हम नित्य प्रति श्री आरती पूजा में स्त्रोत में पढ़ते हैं।

शुक सनकादिक,ध्रुव नारदादिक गुरु उपदेश ते अमरणम।
ऋषि मुनि जन प्रकृत जग में लै दीक्षा प्रभु सुमिरणम।

शुकदेव जी को गर्भयोगीश्वर कहा जाता है। जब वह माता के गर्भ में ही थे तो उन्हें ज्ञान प्राप्त था परन्तु बिना गुरु के वे भी मोक्ष के अधिकारी नहीं हुये। जब उन्होने महाराज जनक जी को गुरु धारण किया तो वह मोक्ष के अधिकारी हुये।

गर्भ योगीश्वर गुरु बिना लागा हरि की सेव।
कहें कबीर वैकुण्ठ से फेर दिया शुकदेव।।
जनक विदेही गुरु किया लागा हरि की सेव।
कहें कबीर वैकुण्ठ में फेर मिला शुकदेव।।

सनक,सनन्दन,सनत कुमार,सनातन और देवर्षि नारद जी ब्रह्मा जी के मानस पुत्र कहलाते हैं। गुरुदेव की कृपा से उनसे नाम दीक्षा लेकर सुमिरण किया तभी वेअमरपद को प्राप्त हुये। धनीधर्मदास जी परम सन्त श्री कबीर साहिब जी के शिष्य हुये हैं,वे गुरु महिमा में वर्णन करते हैं।

अखिल विवुध जग में अधिकारी। व्यास वशिष्ठ महान आचारी।
गौतम कपिल कणाद पातञ्जलि।जौमिनी बाल्मीकि चरणन बलि।
ये सब गुरु की शरणहिं आये। तासे जग में श्रेष्ठ कहाये।।

विश्व में जितने भी ऋषि मुनि,राजर्षि,महर्षि,ब्रह्मर्षि,देवर्षि हुयें हैं उदाहरण देते हैं गौतम,कपिल,कणाद,पातञ्जलि,वेदव्यास,वसिष्ठ,बाल्मीकि आदि ये

सब शास्त्रों के रचियता, ब्रह्मनिष्ठ उच्चकोटि के महापुरुष हुये हैं सभी गुरु की शरण में आये उनकी सेवा करके उनकी प्रसन्नता व कृपा के पात्र बने तब ही जग में श्रेष्ठ और पुज्यनीय हुये। परमात्मा की प्राप्ति जब भी होगी गुरु के माध्यम से ही होगी और कोई साधन है ही नहीं। प्रभु ईसामसीह ने भी अपने शिष्यों के समक्ष ये घोषणा की थी।

I am the door through in which you have to enter to meet him. अर्थात मैं वह द्वार हूँ जिसमें से गुज़र कर ही प्रभु से मिलाप हो सकता है। और कोई रास्ता नहीं है।

come unto me and i shall dispel all thy sufferings.

मेरी शरण लो मैं तुम्हारे सब दुखों को नाश कर दूँगा।

भगवान श्रीकृष्ण जी ने भी अर्जुन के माध्यम से हमें गीता का सन्देश दिया है कि ऐ अर्जुन तू सब धर्मों को छोड़कर एक मेरी शरण में आजा मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूँगा इसमें तनिक भी संशय न कर।स्मरण रहे भगवान श्री कृष्ण अर्जुन के सतगुरु हैं जो उसे मार्गदर्शन कर रहे हैं। क्योंकि भगवान श्री कृष्ण स्वयं अर्जुन के सामने खड़े हैं अर्जुन दर्शन भी कर रहा है तो भी श्री कृष्ण जी कह रहे हैं कि अर्जुन तू मुझे इन आँखों से नहीं देख सकता मुझे देखने के लिये मैं तुझे दिव्य चक्षु देता हूँ। सिद्ध है भगवान का स्वरूप और है जिसे प्राप्त करना है। संसार में जितने भी मत मतान्तर हैं सम्प्रदाय हैं सभी ने एक ही बात पर जोर दिया है सबके एक ही मूल सिद्धान्त हैं सतगुरु के बिना अपने अन्दर में दिव्य ज्योति के दर्शन करना असम्भव है।

लख पीर पैगम्बर औलिया मुल्ला काजी शेख।
किसे शान्त न आया बिन सतगुरु के उपदेश।।



एक बार देवर्षि नारद जी भ्रमण करते हुये वैकुण्ठ लोक में पहुँच गये तो उन्होने भगवान को अकेले और उदास बैठे पाया तो नारद जी ने विनय की भगवन आप अकेले ही और उदास बैठे दिखाई दे रहे हैं। उचित समझें तो मुझे उदासी का कारण बताने की कृपा करें। भगवान ने कहा नारद मैंने ये सृष्टि बनाई इसमें पशु पक्षी कीड़े मकौड़े जानवर पेड़ पौधे इत्यादि सब बनाये थे तो मुझे कोई परेशानी नहीं थी लेकिन जब से मैने मनुष्य को बनाया है तब से ही परेशान हो गया हूँ। कारण ये है कि बाकी सब जीव जन्तु को कोई माँग नहीं थी जैसा उनको बना दिया उसी में वे सन्तुष्ट थे लेकिन ये मनुष्य ऐसा है कि इसकी माँगें ही पूरी होने में नहीं आती। रोज द्वार पर खड़ा हो जाता है आज मुझे फलाँ चीज़ चाहिये आज मुझे ये चाहिए वो चाहिए इसकी माँग ही इतनी हैं कि पूरी होने में ही नहींआती। फिर इससे छिपकर मैं समुन्द्र में जाता हूँ तो ये पनडुब्बी लेकर वहाँ भी पहुँच जाता हैं हिमालय पर जाता हूँ तो ये वहाँ भी पहुँच जाता है, चन्द्रमा पर जाता हूँ मंगल पर जाता हूँ सब जगह ये पहुँच जाता है। अब ये सोचता हूँ कि ऐसी कोई जगह मिले जहाँ ये मनुष्य न पहुँच सके। इसलिये परेशान हूँ। नारद जी ने विनय की भगवन एक सुझाव देता हूँ अगर आपको पसन्द आये तो प्रयोग करके देख लें हो सकता है आपकी समस्या का समाधान हो जाये। वो सुझाव ये है कि मनुष्य हमेशा आपको बाहर की चीज़ों में ढूँढने की कोशिश करता है आप इसके अन्दर छिपकर बैठ जायें यो कभी भी अन्दर झाँकने का प्रयत्न नहीं करेगा। इसलिये ये आपको ढूँढ नहीं पायेगा। भगवान ने कहा सुझाव तो तुम्हारा ठीक है लेकिन इसमें एक समस्या ये है कि ये मुझे

ढूँढ नहीं पायेगा तो आनन्द से हमेशा वंचित हो जायेगा। सदा दुःखी रहेगा। ये मुझे अति प्यारा भी है। मैं नहीं चाहता कि ये दुखी रहे क्योंकि इसे दुःखी रहने के लिये भी तो नहीं बनाया। नारद जी ने कहा इसका सीधा सा हल है कि जो संसार के पदार्थों की चाह करे वह तो आपने संसार में भरपूर कर दिये हैं।अगर कोई केवलआपकी ही चाहना करे तो उसे आप स्वयं सतगुरु बनकर अपनी लखता करा सकते हैं। भगवान ये सुझाव सुनकर अति प्रसन्न हुये। सन्त सहजो बाई जी ने कहा है।

हरि ने मौ सूँ आप छिपायो। गुरु दीपक दे ताहि लखायो।

कि हरि ने स्वयं को मुझसे छिपा लिया परन्तु सतगुरु ने ज्ञान का दीपक देकर हरि का पता बता दिया है। सतगुरु की महिमा उनके अलौकिक गुणों के वर्णन से शास्त्र भरे पड़े हैं। फिर भी सतगुरु की महिमा का वर्णन नहीं हो सकता। इसीलिये तो कहा हैः-

सब धरती कागज करूँ लेखनी करूँ बनराय।
सात समुन्द की मसि करूँ गुरु गुण लिखा न जाये।।

इतनी महिमा है सतगुरु की। जिस सतगुरु ने भव से पार लगाया, चौरासी से छुड़ाकर परमात्मा से मिलाया और भी अनन्त उपकार किये ऐसे सतगुरु के उपकारों के प्रति श्रद्धा और आभार प्रकट करने के लिये वर्ष में एक दिन तो नियुक्त होना ही चाहिए।

प्राचीन काल में आजकल की तरह स्कूल या विद्यालय नहीं हुआ करते थे। उन दिनों गुरुकल आश्रम होते थे। जिनके संचालक ब्रह्मनिष्ठ उच्च कोटि के सन्त महापुरुष हुआ करते थे। विद्यार्थी इन गुरुकुल आश्रमों में रहकर राजनैतिक, सामाजिक,आर्थिक और नैतिक विद्या ग्रहण करते थे



इन विद्याओं के साथ साथ आध्यात्मिक विद्या भी पढ़ाई जाती थी कि किस प्रकार संसार में रहकर संसार के कार्य व्यवहार करते हुये जीवन को सुखी एवम सफल बनाया जा सकता है। विद्यार्थी अपने जीवन के प्रथम पच्चीस वर्ष इन्हीं गुरुकुल आश्रमों में ही व्यतीत करता था। जब वह इन विद्याओं में पारंगत हो जाता था तो अपने सतगुरु की आज्ञा से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता था। उस समय ये नियमऔर मर्यादा बाँधी गई कि जिस परोपकारी सतगुरु ने जीवन जीने का ढंग और आत्म कल्याण का मार्ग सुझाया है उनके उपकारों के प्रति जीवन के निर्माण और व्यवसायों को करते हुये भी वर्ष के 365 दिन में से एक नियुक्त किया जाये।आषाढ़ पूर्णिमा का पवित्र दिन इस मांगिलक कार्य के लिये नियुक्त किया गया कि शिष्य इस दिन अपने सतगुरु के श्रीचरण कमलों में सादर नतमस्तक होकर दण्डवत प्रणाम करे। अपनी श्रद्धानुसार पत्र, फल, तिल,पुष्पादि भेंट करे। सतगुरु के चरणों के समक्ष बैठकर अपने अवगुणों का उल्लेख करते हुये उनसे अपने अपराधों, पापों, त्रुटियों और भूलों के लिये क्षमा याचना करे और विनयपूर्वक प्रार्थना करे कि हे गुरुदेव मुझे ऐसा शुभाशीर्वाद प्रदान करें ऐसा बल प्रदान करें कि मैं आपके आदेशों निर्देशों आदेशों पर चलता हुआ आपकी श्री आज्ञानुसार जीवन के रथ को चलाता हुआ आपकी प्रसन्नता एवम कृपा का पात्र बन जाऊँ। ये था उद्देश्य गुरु पूजा के पर्व का।

हम सब अति सौभाग्यशाली हैं जो हमें श्री सतगुरुदेव दातादयाल जी की चरण शरण और उनकी राहनुमाई प्राप्त हुई है। हमारा कर्तव्य है कि उनकी पूजा आराधना करते हुये, उनका पावन वचनों अनुसार अपने

जीवन को ढालते हुये सतगुरु की प्रसन्नता को प्राप्त करके अपने जीवन को सुखमयी बनायें और परलोक भी सँवार लें।



## रक्षा बन्धन

रक्षा बन्धन का पुनीत पर्व कब से प्रारम्भ हुआ कुछ कहना कठिन है। मगर यह र्स्वमान्य सत्य है कि उसकी मूल भावना हमारे यहाँअत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है। पौराणिक कथा के अनुसार भगवान विष्णु के वामनअवतार ने भी राजा बलि के रक्षासूत्र बाँधा थाऔर उसके उपरान्त ही उन्हें पाताल जाने का आदेश दिया था।आज भी रक्षाबन्धन के समय जो मन्त्र पढ़ा जाता है उसमें इसी घटना का ज़िक्र होता है।

ये बद्धो बलि राजा दानवेन्द्रो महाबलः।
तेन त्वामनुबन्धनामि रक्षे मा चलमाचलः।।

अर्थात यह वही रक्षा सूत्र है जिससे महाबलवान राक्षसों के राजा बलि बाँधे गये। रक्षा सूत्र तुम चल विचल मत हो प्रतिष्ठित रहो। रक्षा सूत्र का अर्थ है रक्षा की व्यवस्था। जिस व्यक्ति के रक्षा सूत्र बाँधा जाता है उसकी रक्षा की भावना ही रक्षा सूत्र में निहित है। रक्षासूत्र के बारे में महाभारत में एक कथा का उल्लेख मिलता है। इस कथा केअनुसार एक समय देवताओंऔर राक्षसों में भयानक युद्ध हुआ जो लम्बे समय तक चला इस युद्ध में राक्षस विजयी हो रहे थे और देवता पराजित। इस पर इन्द्राणी भयभीत होकरअत्यन्त दयनीय दशा में देवताओं के गुरु बृहस्पति जी के पास गईं और उनसे इस समस्या का समाधान पूछा। गुरु बृहस्पति जी ने उपाय बतलाया कि श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को इन्द्राणी इन्द्र को तिलक लगाये और उसकी दाहिनी भुजा पर वेदज्ञ ऋषियों सेअभिमन्त्रित रक्षा सूत्र बाँध दे ऐसा करने पर देवताओं की विजय काआश्वासन दिया। इन्द्राणी ने ऐसा किया भी। इससे इन्द्र को असाधारण शक्ति प्राप्त हुई।

युद्ध का पासा पलटने लगा और देवताओं की विजय हुई। यह कथा भगवान श्री कृष्ण जी ने युधिष्ठिर को उस समय सुनाई थी जब पाण्डव संकट ग्रस्त थे। धर्मराज युधिष्ठिर ने यह साधन अपनाया भी और सफलता भी प्राप्त की।

रक्षा बन्धन का पुनीत पर्व श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को मनाया जाता है। यह रक्षा बन्धन राजा को पुरोहित द्वारा,यजमान के ब्रह्माण द्वारा,पति के पत्नि द्वारा,भाई के बहन द्वारा तथा सतगुरु के शिष्य द्वारा दाहिनी कलाई पर बाँधा जाता है। रक्षाबन्धन में तीन भावनाएँ काम करती हैं। प्रथम जिस व्यक्ति के रक्षा बन्धन किया जाता है उसकी कल्याण कामना,दूसरे रक्षाबन्धन करने वाले की उसके प्रति स्नेह भावनाऔर तीसरे रक्षाबन्धन करने वाले या भेजने वाले की सहायता। इस प्रकार रक्षाबन्धन वास्तव में स्नेह,अपनत्व, शान्तिऔर रक्षा का बन्धन है इसमें सबके सुख और कल्याण की भावना है।

साँस्कृतिक परम्पराओं में समयानुसार परिवर्तन आना सहज स्वाभाविक है। रक्षा बन्धन के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। मुगल शासन काल में अनेक महिलाओं ने आक्रमण कारियों से बचने के लिये बहादुर व्यक्तियों को रक्षा सूत्र भेजेऔर उन व्यक्तियों ने बिना किसी धर्म जाति का भेद किये उन महिलाओंकी रक्षा की। कर्णवती चितौड़ की महारानी थी गुजरात के बादशाह बहादुरशाह ने चितौड़ पर आक्रमण कर दिया। उसकी विशाल सेना से टक्कर लेना चितौड़ के लिये सम्भव नहीं था। महारानी कर्णवती ने अपनी सहायता के लिये मुगल बादशाह हिमायूं के पास राखी भेजी। हिमायुं ने राखी का पूरा पूरा सम्मान किया।



महारानी की सहायता के लिये तत्काल चितौड़ पहुँच गया। हिमायुं के बाद अन्य मुगल बादशाह भी रक्षा के बन्धन को स्वीकारते रहे। विश्वविजय का स्वपन देखने वाला सिकन्दर बादशाह जब पोरस से हार रहा था ऐसी परिस्थिती में युनान की एक महिला ने राजा पोरस के पास इस विचार से राखी भेजी कि वह उसे बहन माने तथा हर हालत में सिकन्दर के प्राणों की रक्षा करे। राखी की लाज बचाने के लिये अनेक बार अवसर मिलने पर भी पोरस ने सिकन्दर के प्राण नहीं लिये।

आजकल प्रायः रक्षा बन्धन का पर्व भाई बहनों के ही त्यौहार के रूप में मनाया जाता है। बहनेअपने भाईयों के उज्जवल भविष्य के लिये मंगल कामनाएं करती हैंऔर किसी भी संकट के समयअपनी सुरक्षा का उनसे आश्वासन पाती हैं। रक्षाबन्धन का पर्व केवल भाई बहन के पवित्र स्नेह के बन्धन का पर्व ही सम्पूर्ण मानव जाति के स्नेह के बन्धन का त्यौहार है।

रक्षा बन्धन का पर्व केवल भाई बहन के पवित्र स्नेह के रूप में कब से प्रारम्भ हुआ सम्भवतः महाभारत में द्रोपदी चीरहरण के पश्चात ही भाई बहन के पर्व में परिवर्तित हो गया। पाण्डवों ने जब राजसूय यज्ञ काआयोजन किया था उस यज्ञ में भगवान श्रीकृष्ण की अग्रिम पूजा के लिये वहाँ उपस्थित सभी ऋषियों,महर्षियों,राजा महाराजाओं ने स्वीकार किया कि अग्रिम पूजा श्री कृष्ण जी की की जाए। लेकिन चन्देरी के राजा शिशुपाल को यह स्वीकार्य न हुआ। शिशुपाल ने आपत्ति की और भरा सभा में श्री कृष्ण जी को कई अपशब्द कह डाले। अन्य राजाओं के मना करने पर भी वह श्री कृष्ण जी की शान में अत्यन्त अपमान

सूचक शब्द कहता रहा। श्री कृष्ण जी बड़ी देर तक मौन भाव से उसके अनुचित व्यवहार को सहन करते रहे परन्तु जब शिशुपाल का घृणित व्यवहार सीमा पार कर गया तो भगवान श्री कृष्ण जी ने सुदर्शन चक्र से शिशुपाल का शीश धड़ से अलग कर दिया। सुदर्शन चक्र से भगवान की अँगुली में खरोंच आ गई जिसके फलस्वरूप उनकी अँगुली में रक्त बहने लगा। महारानी द्रोपदी ने जब देखा तो उसने अपनी कीमती साड़ी फाड़कर एक टुकड़ा जलाकर उसकी राख अँगुली पर लगा दी और दूसरा टुकड़ा फाड़कर अँगुली पर पट्टी बाँध दी। द्रोपदी की इस प्रेमाभक्ति पूर्वक कुर्बानी से आश्चर्य में पड़कर श्री कृष्ण जी ने पूछा, द्रोपदी यह तूने क्या किया? साधारण से जख्म के लिये इतनी कीमती साड़ी को व्यर्थ में ही फाड़ दिया। जब कि पट्टी के लिये साधारण कपड़ा ही काफी था। इस पर द्रोपदी ने उत्तर दिया कि--।

लहू इस हाथ से टपके तो चूल्हे में गई साड़ी।
फक्त इक बूँद पर करूं लाखों कुर्बां नई साड़ी।।
अगर फाहे को हो दरकार प्यारे खाल गर्दन की।
तो हाज़िर है ये खोलिये किस्मत फिलहाल गर्दन की।।

हे प्रभु एक बूंद पर एक साड़ी तो क्या लाखों नई साड़ियाँ भी कुर्बान हैं। फाहे के लिये अगर गर्दन की खाल की ज़रूरत है तो ये मेरा सौभाग्य है वह गर्दन भी हाज़िर हैं। द्रोपदी की अनुपम श्रद्धा,भक्ति,प्रेम,त्याग बलिदान से प्रसन्न हो कर श्री कृष्ण जी ने कहा।

भाव सच्चा काम मरहम से भी ज्यादा कर गया।
जख्म ही क्या दिल मेंरा तेरे वचन से भर गया।।



है बस मेरी नज़र श्रद्धा प्रेम पर और मान पर।
कम है इस धज्जी से जो मैं थान चुन दूँ थान पर।।
रीझ जाता है फक्त दिल प्रेम के इक पान पर।
भाव बिन थूकूँ नहीं गाड़ी भरे सामान पर।।

द्रोपदी! मैं तेरे इस अनुपम प्रेमभक्ति,श्रद्धा,त्याग और बलिदान पर अति प्रसन्न हूँ।तेरे त्याग,बलिदान और तेरा प्रेम देखकर मेरा घाव तो क्या मेरा दिल भी तेरे वचन से भर गया है। तूने जो ये पट्टी बाँधकर मुझे अपने प्रेम के बन्धन में बाँध दिया है इसके बदले मेंअगर मैं साड़ियों केअम्बार भी लगा दूँ,थान पर थान चुन दूँ तो भी तेरे इस प्रेम के बन्धन की बराबरी नहीं कर सकते। तेरी इस पट्टी के एकएक तार का ऋणि हूँ। द्रोपदी ने भगवान की अँगुली पर पट्टी बाँध कर भगवान को अपने प्रेम के बन्धन में बाँध दिया। श्री कृष्ण ने द्रौपदी के इस अनुपम बलिदान का बदला समयआने पर चुका देने का वचन दिया जिसे उन्होनेअवसर आने पर निभाया भी। श्रद्धा भक्ति पूर्वक श्रीकृष्ण को समर्पण किया हुआ वही साड़ी का टुकड़ा दुर्योधन की राज्य सभा में साड़ियों के अम्बार में बदल गया और उसने द्रोपदी की लाज की रक्षा की। द्रौपदी ने जो पट्टी बाँधी ये प्रेम का बन्धन था।द्रोपदी भगवान श्रीकृष्ण जी को अपना भाई मानती थी। इस प्रेम के बदले इसमें भगवान के द्वारा(भाई के द्वारा बहन की सुरक्षा वचन था)यह एक एतिहासिक और धार्मिक घटना होने के कारण यह त्यौहार भाई बहन के पवित्र स्नेह के रूप में मनाया जाने लगा। ये त्यौहार भाई बहन के प्रेम का ही नहीं,भगवान और भक्त के,सतगुरु और शिष्य के स्नेह बन्धन का भी त्यौहार है शिष्य अपने सतगुरु के कर

कमलों में राखी बाँधता है और यही कामना करता है कि मेरे सीस पर मेरे इष्टदेव का वरदहस्त जन्मों जन्मों तक कायम रहे। श्री सतगुरु भी शिष्य को केवल आश्वासन ही नहीं देते बल्कि शिष्य की हर प्रकार से आधिदैहिक,आधिदैविक औरआध्यात्मिक रक्षा करने की ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले लेते हैं।और उसे निभाते भी हैं। इतिहास साक्षी है कि जब जब भक्तों पर भीर पड़ी है तब तब भगवान ने उनकी रक्षा की वे अपना विरद निभाते आये हैं निभा रहे हैं और निभाते रहेंगे।।

आप पाप त्रय ताप गये जो गुरु शरणी आये।

जो भी उनकी शरण में आया और उनसे अपने स्नेह का बन्धन बाँधा है उसके तीनो ताप खत्म हो जाते हैं और शिष्य सच्चे सुख और शाश्वत आनन्द को प्राप्त करके अपने जीवन को सफल करता है। जिन सौभाग्यशाली गुरुमुखों ने अपनी प्रीत का बन्धन श्री सतगुरु के चरण कमलों से बाँधा है वो सब तरफ से सुरक्षित हो जाते हैं सतगुरु से किया हुआ प्रीत का बन्धन ही अमर बन्धन है।

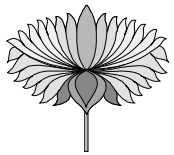



## लोहड़ी

भारतीय संस्कृति में रचे-बसे अनेकों त्यौहार हैं जोआज भी प्रेम व सद्भावना की मिसाल पेश कर जन जन को बिना किसी जात-पात व धर्म के एक जुट रहने की प्रेरणा देते हैं। एक ऐसा ही उत्तर भारत के प्रांतों में मनाया जाने वाला त्यौहार है लोहड़ी। लोहड़ी का त्यौहार यूं तो विशेष रूप से पंजाब व काश्मीर में अत्यन्त ही हर्षोल्लास से मनाया जाता है लेकिन आजकल इसे सभी जगह मनाया जाता है।

लोहड़ी का त्यौहार एक मुस्लिम डाकू दूल्ला भट्टी की याद में मनाया जाता है। इतिहास के पन्नो में इस डाकू का ज़िक्र आता है। कहा जाता है कि अकबर बादशाह के काल में दूला भट्टी नामक डाकू था जिसका कार्य अमीरों को लूटना व गरीबों की मदद करना था वह अत्यन्त ही नेक व दरियादिली इन्सान था व उसके मन में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं था वह गरीबों को सदैव खाना खिलाता था और जिन लड़कियों की शादि नहीं होती थी उनकी भरपूर मदद किया करता था। मुगल बादशाह अकबर ने उसे पकड़वाने की कई बार कोशिश भी की लेकिन वह लोगों का इतना चहेता था कि मुसीबत के समय वे दुला भट्टी को घर में छिपा लेते थे।

एक मर्तबा ब्राह्मण की बेटी की शादी इसलिये नहीं हो पा रही थी कि उसके पास शादी में देने के लिये कुछ नहीं था। उसकी लड़की ''सुंदर-मुंदरिये'' बहुत ही सुन्दर थी व धार्मिक कृत्यों में लगी रहती थी। एक दिन गरीब ब्राह्मण ने दूला भट्टी से लड़की की शादी के लिये फरियाद कर मदद मांगी तो दूला भट्टी उनके घर आया व जब उसने

देखा कि 'सुन्दर मुन्दरिये' का कोई भाई नहीं है तो उसने उस लड़की से राखी बँधवा ली। व उसका भाई बनकर विवाह के दिन पूरी मदद देने का आश्वासन देकर चला गया। जब यह बात अकबर बादशाह तक पहुंची तो बादशाह ने उसे पकड़वाने के लिये पूरी तैयारी कर ली।

आखिर वायदे केअनुसार सुंदरमुंदरिये की शादी के दिन वह उसके घर पहुंचा व अपने साथ ढेरों सामान कपड़े व ज़ेवरात के साथ साथ वह बारातियों के लिये सौ मन शक्कर भी लाया। सुंदर-मुंदरिये की शादी शाही तरीके से की गई व विदाई के समय भाई की रस्म पूरी करते समय उसने अपनी शाल में शक्कर भर कर बारातियों के आगे कर दी। लेकिन उसका शाल चीनी के भार से फट गया, खैर खुशी खुशी सुंदर-मुंदरिये को विदाकर जब दूला भट्ठी जाने को तैयार हुआ तो घर से बाहर निकलते हीअकबर के सैनिकों ने उसे घेर लिया दोनों ओर भीषण युद्ध हुआ अन्त में दूला भट्टी मारा गया। कहते हैं उस दिन तमाम गरीबों की आँखों मेंआँसूं आ गये व उनके घर चूल्हा तक न जला। तब से उस डाकू की याद में शीतकाल की सबसे ठन्डी रात में आग जला कर लोकगीत के माध्यम से उसकी याद ताज़ा की जाती है। इस त्यौहार से जुड़े लोकगीत कई दिन पूर्व शाम होते ही कुछ लड़के-लड़कियों के समूह घर घर जाकर गाते हैं।

सुन्दर मुन्दरिये हो, तेरा कौन विचारा--दूला भट्टी वाला------।

समय तो परिवर्तनशील है इसी के साथ जीवन के पहलू बदलते हैं। ज्ञान की परिभाषा और विचारधारा बदलती है। हर काल पिछले काल से भिन्न होता है। सृष्टि का विकास क्रम ही यह भिन्नता पैदा करता



है। इसीलिये अगली पीढ़ी का व्यक्ति पिछली पीढ़ी से भिन्न सोच विचार रखता है। कहते हैं कि काम कुछ भी करो सर्वश्रेष्ठता रूप इकाई वाले बनकर निकलो। यश तो सदा विशिष्ट पुरुष का ही फैलता है चाहे राम हो चाहे रावण। रावण असुर था असुरों का राजा था। परमशक्तिशाली भी था। तप में देवताओं को भी पीछे छोड़ गया था इसीलिये तो राम का महत्व है। रावण के पहले राम ने न जाने कितने बड़े बड़े राक्षस मारे होंगे। किन्तु उन्हें रावण के परिप्रेक्ष्य में ही याद करते हैं। अनेक लोग चोरी करते हैं पकड़े जाते हैं किसे याद है किसी चोर का नाम। लेकिन डाकू बनते ही सबको याद हो जाता है। वह भी यदि गरीबों की सहायता करे तो मान लो कि अमर हो गया। इसका अर्थ ही यह है कि ज़माना केवल विशिष्ट को ही याद रखता है। साधारण को नहीं।

जब कृष्ण जी द्वारिका से पत्नियों सहित कुन्ती से मिलने आये तो कुन्ती ने पत्नियों से सम्बोधित करते हुये कहा था तुम लोग भाग्यवान सन्तान पैदा करो। परम शूरवीर और पंडित पैदा करने की आवश्यकता नहीं है यूँ तो मेरे पुत्र भी शूरवीर हैं अपने आप में पूर्ण शिक्षित हैं किन्तु देखो बनों में भटक रहे हैं। इसका संकेत भी श्रेष्ठता की ओर ही है गुणियों में प्रथम गणना होनी चाहिये श्री कृष्ण ने कहा है जिस धर्म में भी लगे हो वहाँ अपना शीर्षस्थ स्थान बनाओ।

## मकर सन्क्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैं कि:-

माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु।।
हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु।।
जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु।।
कामी करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु।।
सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु।।
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु।।
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु।।
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु।।
माघि सुचे से काँढीअहि जिन पूरा गुरु मेहरबानु।।

उपरोक्त वाणी में माघ मास का वर्णन करते हुये सत्पुरुष जीव के प्रति सदुपदेश करते हैं कि ऐ जीव! सन्तों सतपुरुषों की पावन संगति में उनकी चरण-रज से स्नान करना ही वास्तव में माघ मास का सच्चा स्नान है। तू सन्तों सत्पुरुषों की संगति में परमेश्वर के नाम का स्मरण कर। उस सच्चे नाम की महिमा सुन और उसे औरों को भी सुना। जिससे जन्म जन्मान्तर की कर्मों की मैल उतर जाती हैऔर मन से अभिमान जाता रहता है। इससे काम एवं क्रोध मोहित नहीं कर पातेऔर लोभ रूपी कुत्ता मर जाता है। तात्पर्य यह कि सन्त सत्पुरुषों की चरणशरण में नाम का स्मरण करने से मन से सभी विकार दूर हो जाते हैं और वह पवित्र-निर्मल बन जाता है इसके अतिरिक्त सन्त सत्पुरुषों की पावन संगति से यह लाभ भी होता है कि सतमार्ग अर्थात भक्ति मार्ग



पर चलने से सारा संसार यश गाता है। जीवों पर दया करने अर्थात उन्हें सत्पथ पर लगाने से अड़सठ तीर्थों के स्नान तथा अन्य पुण्यकर्मों का फल स्वतः ही प्राप्त हो जाता है। दया करके स्वयं परमेश्वर जिसे ऐसी सद्बुद्धि प्रदान करें वही विचारवान पुरुष है। सत्पुरुष श्री गुरु अर्जुनदेव जी महाराज फरमाते हैं कि सन्तों सतपुरुषों की शुभ संगति के प्रताप से जिन्हें अपने इष्टदेव प्रभु के मिलन का उत्तम संयोग उपलब्ध हुआ है, मैं उन पर कुरबान जाता हूँ। माघ मास के द्वरा सतपुरुष उपदेश करते हैं कि वही पवित्र एवं पुण्यभागी जीव हैं, जिन पर पूर्ण सद्गुरु का कृपापूर्ण हाथ है। ऐसे जीव ही माया जाल से छूट सकने में सफल होते हैं।

माघ मास के स्नान का बड़ा महत्त्व है और लोग इस महीने अपनी अपनी श्रद्धा भावना के अनुसार तीर्थों पर जाकर स्नान करते हैं। किन्तु विचारपूर्वक यदि देखा जाये तो वे केवल शरीर का ही स्नान करते हैं मन का स्नान वे नहीं करते। तीर्थों पर स्नान करने से मन में विद्यमान विकारों की मलिनता कदापि नहीं धुलती और न ही मन पवित्र निर्मल होता है। और जब तक मन पवित्र निर्मल नहीं होता, जीव का काम बनने वाला नहीं है। किन्तु इस बात की समझ भी मनुष्य को तभी आती है, जब सौभाग्य से उसे सन्त सत्पुषों की पावन संगति प्राप्त हो जाती है। सतपुरुषों के वचन हैं कि:

मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मन हछा न होइ।
इह जगतु भरमि भुलाइआ बिरला बूझै कोई।।

यदि मनुष्य का मन मलिन है अर्थात उसमें विकार भरे हुए हैं, तो उसके द्वारा किये गए समस्त कर्म धर्म मलिनता से पूर्ण हैं। केवल शरीर को

स्नान कराने से मन पवित्र-निर्मल नहीं हो सकता। संसारी मनुष्य भूल एवं भ्रम का शिकार है जो यह समझता है कि तीर्थों पर जाकर मात्र स्नान कर लेने से मन शुद्ध एवं निर्मल हो जाएगा। इस यथार्थता को सत्पुरुषों की कृपा से कोई विरला ही समझता है। मन कहाँ पवित्र निर्मल होता है? इसका उत्तर महापुरुषों ने अपनी वाणी में स्पष्टरूप से दे दिया है कि सन्त सतपुरुषों की पावन चरण रज में स्नान करने और उनकी शुभसंगति में प्रभु नाम का सुमिरण करने से ही मन से विकारों की मैल दूर होती है और वह उज्ज्वल एवं निर्मल बनता है। अपने मन के विकारों से मात्र तीर्थों पर जाकर स्नान कर लेने से यह मैल कदापि दूर नहीं हो सकती।

(दुष्टान्त-श्री कबीर साहिब जी ने तीर्थ यात्री को कद्दू दिया कि इसे सब तीर्थों पर स्नान कराना) दूसरा उदाहरण तीर्थ यात्री ने काली गउएं रूपी तीर्थों को सन्तों के सरोवर में स्नान करके सफेद होते देखा।

गंगा जमुना गोदावरी सरसुती ते करहि उदमु साधू की ताईं।।
किलविख मैलु भरे परे हमरे विचि हमरी मैलु साधू की धुरी गँवाइं।।

धन्य हैं वे गुरुमुखजन, जो सत्पुरुषों की शरण संगति ग्रहण कर उनकी आज्ञा मौज अनुसार नाम भक्ति की कमाई कर रहे हैं। ऐसे गुरुमुख सतपुरुषों के चरण सरोवर में दिन रात मज्जन कर अपना लोक परलोक सँवार लेते हैं।



## फाल्गुन की सन्क्रान्ति

फलगुणि अनंद उपारजना,हरिसजण प्रगटे आइ।।
सन्त सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ।।
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ।।
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ।।
मिलि रहीआ मंगलु गावही गीत गोबिन्दअलाइ।।
हरि जेहाअवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ।।
हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितिअनु जाइ।।
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमैं धाइ।।
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ।।
फलगुणि नित सलाहीऐ जिसनो तिलु न तमाइ।।

अर्थातः-फाल्गुन मास के वर्णन में सत्पुरुष फरमाते हैं कि सच्चा सुख और आनन्द उन जीवात्माओं ने ही उपार्जित किया है, जिनके हृदय में प्रभु प्रियतम प्रकट हुए हैं अर्थात जिन्होने हृदय में प्रभु प्रियतम का दर्शन किया है। प्रभु के प्यारे सन्त जन जब सहायक हुए तो उन्होने कृपा करके जीवात्मा को प्रभु प्रियतम से मिला दिया। उनके हृदय की सेज प्रभु प्रियतम के विराजमान होने से सुहावनी हो गई और उन्हें समस्त सुखों की प्राप्ति हो गई। दुःखों के लिये अब हृदय में कोई जगह ही नहीं रही। जिन सौभाग्यशाली आत्माओं ने सच्चे पति परमेश्वर को प्राप्त कर लिया, उनकी सभी मनोकामनायें पूर्ण हो गईं क्योंकि जब प्रभु प्रियतम मिल गये तो समझो उन्हें सब कुछ मिल गया। अब वे आत्मायें अपनी साखियों अर्थात सत्संगी आत्माओं के साथ मिलकर मंगल गीत गाती

और प्रभु की महिमा का गुणगान करती हैं। प्रभु प्रियतम के अतिरिक्त वे अन्य किसी से लिव नहीं लगातीं, क्योंकि उन्हें प्रभु जैसा हितैषी और अपना अन्य कोई दिखाई नहीं देता। प्रभु ने उनका लोक परलोक सँवार दिया और उन्हें अपने निश्चल धाम में ठौर दे दी। प्रभु ने उन्हें संसार सागर में डूबने से बचा लिया। अब वे आत्मायें जन्म मरण के चक्र में नहीं आयेंगी। सत्पुरुष फरमातें हैं कि जीव में इतनी सामर्थ्य कहां कि परमेश्वर की अतुल एवं महान महिमा का वर्णन कर सके, क्योंकि जीव की जिह्वा एक है जबकि परेश्वर के गुण अनेक हैं। जो प्रभु के चरणों में शरणागत हो जाते हैं, वही भवसागर से पार होते हैं। फाल्गुन मास का यही उपदेश है कि उस निष्काम प्रभु की, जिसे तिल बराबर भी किसी प्रकार का लालच जीव से नहीं है, प्रतिदिन गुण-स्तुति गायन करनी चाहिये।

फाल्गुन मास का आगमन बसन्त ऋतु के आगमन का सूचक है, जिसके आते ही चहूँ ओर हरियली ही हरियली दिखाई देने लगती है। धरती पर हरी हरी घास देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानों प्रियतम का स्वागत करने के लिये प्रकृति ने मखमली फर्श बिछा रखा हो। बसन्त ऋतु के आते ही प्रकृति का कण-कण अपना हर्षोल्लास प्रकट करने लगता है। फाल्गुन में जबकि प्रकृति का कण कण हर्ष आनन्द और खुशी से मुस्करा रहा है, उस समय क्या आम संसारी मनुष्य का हृदय भी सच्चे आनन्द एवं हर्ष से भरपूर है? ऊपर से चाहे हमें ऐसा भासता हो कि आम संसारी मनुष्य का जीवन हर तरह से सुखमय एवं आनन्दपूर्ण है, परन्तु हम यदि उसके मन में झाँकर देखें तो हम पायेंगे



कि उसे सहस्त्रों दुःखों ने, चिन्ताओं ने और कल्पनाओं ने घेर रखा है। यद्यपि वह नित्य सुख, शाश्वत आनन्द और परमशान्ति का अभिलाषी है, परन्तु चाहने पर तथा प्रयत्न एवं पुरुषार्थ करने के उपरांत भी उसे सच्चा सुख, सच्चा आनन्द और सच्ची खुशी प्राप्त नहीं होती। ऐसा क्यों है? इसलिये कि आम संसारी मनुष्य मन के धोखे में आकर यह मान बैठा है कि आनन्द और खुशी संसार के पदार्थों में, शरीर के सुख आराम में, शरीर की साज सज्जा में तथा इन्द्रियों के रस भोगों में है और ऐसा मान कर वह हर समय इन्हीं की प्राप्ति के यत्न में लगा रहा है। इस प्रकार सम्पूर्म आयु व्यतीत हो जाती है, परन्तु सच्ची खुशी और सच्चे सुख का मुख देखना नसीब नहीं होता। जब इनमें खुशी और आनन्द है ही नहीं, तो फिर मिले कैसे?

सच्चा आनन्द और खुशी कैसे प्राप्त हो सकती है? इसका उत्तर महापुरुषों ने अपनी वाणी में स्वपष्ट रूप से दे दिया है कि सच्चा आनन्द और सच्ची खुशी वही जीवात्मा प्राप्त कर सकती है, जिसके हृदय रूपी सेज पर प्रभु प्रियतम आ विराजते हैं। अन्य शब्दों में यूँ कहा जा सकता है कि जिसके हृदय मे प्रभु बस जाते हैं, प्रभु का ध्यान और उसकी याद बस जाती है, जो हर पल उनके ध्यान में तल्लीन रहता है, वही सच्चे आनन्द को प्राप्त करता है। प्रभु की याद को भुलाकर उन्हें अपने हृदय की सेज पर विराजमान किये बिना चाहे कोई सम्पूर्ण सृष्टि के धन पदार्थ, शारीरिक सुख सुविधाओं से सामान तथा ऐन्द्रिक भोग क्यों न प्राप्त कर ले, उसे न तो सच्चा सुख आनन्द प्राप्त हो सकता है और नही उसका जन्म मरण का चक्र समाप्त हो सकता है। किन्तु जैसा

कि महापुरुषों ने अपनी वाणी में फरमाया कि प्रभु प्रियतम तभी जीव के हृदय रूपी सेज पर विराजते हैं जब सन्त सतपुरुष अपनी कृपा एवं दयालुता से जन्म जन्मान्तर से बिछुड़ी हुई आत्मा का परमात्मा से मिलाप करा देते हैं। सन्तों के वचन हैं किः-

परमातम से आत्मा , जुदा रहे बहु काल।।
सुन्दर मेला करि दिया, सतगुरु मिले दयाल।।

इससे यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है कि जीव जब तक सन्त सत्पुरुषों की शरण ग्रहण नहीं करेगा, मनमति त्यागकर जब तक सत्पुरुषों के आदेशों, निर्देशों एवं उपदेशों का पालन नहीं करेगा, उनकी आज्ञा मौज में चलकर जब तक उनकी कृपा एवं प्रसन्नता का पात्र नहीं बनेगा, तब तक उसकी अभिलाषा पूर्ण होना असम्भव है। इसलिये जो सच्चे आनन्द और सच्ची खुशी प्राप्त करने का इच्छुक हो, उसे चाहिये कि सत्पुरुषों की आज्ञा मौज में चलकर उनकी कृपा दृष्टि का पात्र बने, क्योंकिउनकी कृपा से ही परमात्मा से मिलाप हो सकताऔर सच्चा सुख आनन्द प्राप्त हो सकता है। मन के परामर्श अनुसार कर्म करके तो वह जीवन पर्यन्त सुखआनन्द प्राप्त नहीं कर सकता। सत्पुरुषों के वचन हैंः-

मनमुख करम कमावणे जिउ देहागणि तनि सीगारु।
सेजै कंतु न आवी नित नित होइ खुआरु।।
पिर का महलु न पावई ना दीसै घरु बारु।।
भाई रे इक मनि नामु धिआइ।।
संता संगति मिलि रहै जपि राम नामु सुखु पाइ।।
गुरुमुखि सदा सोहागणी पिरु राखिआ उर धारि।।



मिठा बोलहि निवि चलहि सेजै रवै भतारू।।
सोभावंती सोहागणी जिन गुर का हेतु अपारु।।
पूरै भागि सतगुरु मिलै जा भागै का उदउ होइ।।
अंतरहु दुखु भ्रमु कटीऐ सुखु परापति होइ।।
गुर कै भाणै जौ चलै दुखु न पावै कोइ।।
गुरु के भाणै विचि अंमृतु है सहजै पावै कोइ।।
जिना परापति तिन पीआ हउमै विचहु खोइ।।
नानक गुरुमुखि नामु धिआइऐ सचि मिलावा होइ।।

सत्पुरुष फरमाते हैं कि जिस प्रकार कोई दुहागिन अर्थात् अभागिन स्त्री पति का कहना न मानने और मनमति करने अर्थात् अपने मन के विचारों पर चलने से पति की प्रसन्नता प्राप्त नहीं कर सकती चाहे वह कितने ही सुन्दर सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण क्यों न शरीर पर धारण करे, उसी प्रकार मनमति पर चलने वाला जीवन भी चाहे कितना ही रूपवान,धनवान, कुलवान तथा ज्ञानवान क्यों न हो, प्रभु प्रियतम की प्रसन्नता एवं निकटता प्राप्त नहीं कर सकता। उसके हृदय रूपी सेज पर प्रभु प्रियतम नहीं विराजते, जिससे उसे इस जन्म में भी दुःखी और परेशान होना पड़ता है तथा मरणोपरान्त भी चौरासी लाख योनियों में भटकना पड़ता है। वह प्रभु प्रियतम के चरणों में निवास प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिये ऐ भाई! एकाग्रचित्त होकर परमात्मा के नाम का सुमिरण करो। किन्तु प्रभु के नाम का सुमिरण किस प्रकार करो? सतपुरुषों से मिलकर, उनकी शरण संगति में रहकर । इससे तुम्हें सच्चे सुख आनन्द की प्राप्ति होगी। जो गुरुमुख है अर्थात् सदा गुरु आज्ञा में

तत्पर रहकर जीवन व्यतीत करता है, वही सौभाग्यशाली है, प्रभु प्रियतम सदैव उसके हृदय में बसते हैं। वह भाग्यशाली जीव अपने प्रियतम की प्रसन्नता के लिए मधुर वचन बोलता है तथा विनम्र आचरण करता है, फलस्वरूप उसके हृदय की सेज पर प्रियतम सदा निवास करते है। जिसके मन में सद्गुरु के प्रति असीम अनुराग होता है, वही सौभाग्यशाली है, क्योंकि प्रभु प्रियतम के सम्मुख वही शोभा प्राप्त करता है जब जीव का भाग्योदय होता है, तभी शुभकर्मों के फलस्वरूप पूर्ण सद्गुरु से उसका मिलाप होता है। सतगुरु की शरण संगत प्राप्त होने पर जीव के दुःखों और भ्रमों का नाश हो जाता है और उसे सच्चे सुख आनन्द की प्राप्ति होती है। यदि जीव निरन्तर सद्गुरु की आज्ञा मौज में चलता रहे, उनके आदेशानुसार सब कार्यवाही करता रहे, तो दुःख उसके कदापि निकट नहीं आ सकता। सद्गुरु के आज्ञा पालन में आत्मिक आनन्द रूपी अमृत निहित है। जो उनकी आज्ञा मौज में चलता है, वह आत्मिक आनन्दरूपी अमृत को सहज ही प्राप्त कर लेता है। सौभाग्यशाली जीव, जो इस आनन्द को प्राप्त कर लेता है,उसके अहंकार का नाश हो जाता है। अन्त में सत्पुरुष फरमाते हैं कि ऐ मनुष्य! गुरुमुख बनकर अर्थात सतगुरु की आज्ञा मौज अनुसार नाम का सुमिरण कर। इसी से सत्यस्वरूप प्रभु से मिलाप सम्भव है।

जब जीव का मिलाप सत्यस्वरूप प्रभु से हो जाता है, तो फिर उसकी सभी कामनाएं पूर्ण हो जाती है। जिसे सकल सृष्टि के स्वामी मिल जायें, उसे तो मानो सब कुछ ही प्राप्त हो गया। ऐसा सौभाग्यशाली जीव प्रभु प्रियतम के घट में दर्शन करता हुआ सदा ही आनन्दित और



प्रसन्नचित रहता है।और अन्य संस्कारी एवं भक्तिमान आत्माओं के साथ मिलकर मंगल गीत और प्रभु प्रियतम की गुण-स्तुति गायन करता है।

संतन कै परसादि हरि हरि पाइआ राम।।
इछ पुंनी मनि सांति तपति बुझाइआ राम।।
सफला सु दिनस रैणै सुहावी अनद मंगल रसु घना।।
प्रगटे गुपाल गोबिंद लालन कवन रसना गुणभना।।
भ्रम लोभ मोह विकार थाके मिलि सखी मंगलु गाइआ।।
नानकु पइअँपै संत जंपै जिनि हरि हरि संजोगि मिलाइआ।।

अर्थः-सदगुरु की कृपा द्वारा मैने परमात्मा को प्राप्त कर लिया है। अब मेरी सभी मनोकामनाएं पूर्ण हो गई हैं,मेरा मन शान्त हो गया है और मन की जलन बुझ गई है। सद्गुरु की कृपा से जब मेरा परमात्मा से मिलन हुआ। वह दिन शुभ है, वह रात्रि सौभाग्यशालिनी है, क्योंकि उससे मुझे अनगिनत खुशियां प्राप्त हुईं, आत्मिक आनन्द का घना-घना रस मिला। अब तो प्यारे प्रभु मेरे हृदय में ही प्रकट हो गये हैं। प्रभु के मिलाप से मुझे जो कुछ प्राप्त हुआ है, उसका मैं जिह्वा द्वारा कैसे बखान करूँ? प्रभु मिलन से मेरे भीतर से भ्रम, लोभ तथा मोह आदि विकार दूर हो गये हैं। अब मैं सत्संगी आत्माओं के साथ मिलकर प्रभु की गुण स्तुति के गीत गाता हूँ। सद्गुरु के शरणागत होकर मैं हर समय उनके उपकारों को स्मरण करता रहता हूँ, क्योंकि उन्होने परमात्मा के साथ मेरा मिलन करा दिया है।

धन्य हैं वे गुरुमुख आत्मायें, जो समय के परिपूर्ण सन्त सद्गुरु की चरण शरण ग्रहण कर उनकी आज्ञा मौज अनुसार प्रभु नाम का सुमिरण

करने और प्रभु को प्राप्त करने के यत्न में संलग्न हैं। ऐसी भाग्यशाली आत्मायें ही सद्गुरु की अनुकम्पा से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होती हैं और प्रभु नाम के सुमिरण से यह जीवन भी सुख, आनन्द तथा खुशी से व्यतीत करती हैं और प्रभु के धाम में भी स्थायी निवास प्राप्त करती और उज्जवल मुख होती हैं।



## चैत्र मास की सन्क्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैं:-

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा।।
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा।।
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा।।
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा।।
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा।।
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा।।
जिनि राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा।।
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना।।
चेति मिलाए सो प्रभु तिस कै पाइ लगा।।

चैत्र मास के वर्णन में महापुरुष फरमाते हैं कि परमेश्वर की आराधना करनी चाहिये, जिससे असीम आनन्द की उपलब्धि होती है। रसना अथवा जिह्वा द्वारा नाम का उच्चारण करने की विधि सन्तों सत्पुरुषों से मिलकर ही प्राप्त की जा सकती है, क्योंकि सन्त सत्पुरुष ही सुमिरण की विधि जानते हैं और मनुष्य को बतला सकते हैं। जिन्होने नाम का सुमिरण और भजन-भक्ति की कमाई करके परमात्मा की प्राप्ति कर ली है, उन्हीं का संसार में आना सफल गिना जाता है। एक क्षण के लिये भी परमात्मा की याद के बिना, परमात्मा के नाम सुमिरण के बिना जो जीना है, वह तो मानों अपने जन्म को व्यर्थ गँवा देना है। वह परमात्मा जल मे, थल में, धरती तथा आकाश में और वनों में सर्वत्र परिव्याप्त है। यदि मनुष्य ने उस परमात्मा को, उसके प्रेम को उसकी भक्ति को,

उसकी याद को चित्त में नहीं बसाया, तो उसका दुःख कितना अधिक है? अभिप्राय यह कि वह अत्यधिक दुःख पाता है किन्तु जिन्होने उस परमात्मा को अपने चित्त में बसाया है उसी याद को अपने तन प्राण में रचाया है, उनका अत्युत्तम भाग्य है। महापुरुष फरमाते हैं कि मेरे मन में प्रभु दर्शन की तीव्र अभिलाषा है। जो कोई मेरा परमात्मा से मिलन करा दे, मैं उसके चरणों में लगकर सब कुछ न्यौछावर कर दूँ।

महापुरुषों के पावन वचन सभी के कल्याण एवं हित के लिये होते हैं। यदि मनुष्य अपने जीवन को उनके वचनों के सांचे में ढाल ले, उन वचनों पर पूरी तरह आचरण करे, तो फिर निश्चय ही उसका यह जीवन भी सुखमय एवं आनन्दमय बन जाये और परलोक भी सँवर जाए।



## बैसाख की सन्क्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैं किः-

बैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम विछोहु।।
हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु।।
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु।।
पलचि पलचि सगलि मुई झूठै धंधै मोहु ।।
इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि।।
दयु विसारि बिगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ।।
प्रीतम चरणी जो लगै तिन की निरमल सोइ।।
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ।।
वेसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ।।

वैसाख मास आ गया है, अतएव सत्पुरुष बैसाख मास के द्वारा जीव के प्रति उपदेश करते हैं कि जिनका परमात्मा के चरणों में प्रेम नहीं है, जो अपने मालिक परमपिता परमात्मा से बिछुड़े हुए हैं, उन्हें सुख और शान्ति कहाँ? वे तो सदा दुःखी अशान्त और व्याकुल रहते हैं। अपने सच्चे सज्जन परमात्मा को विस्मृत करके आम संसारी जीवों की सुरति माया के धोखे में आ गई है और पुत्र,स्त्री तथा धन आदि में आसक्ति हो गई है। किन्तु इनमें से तो कोई भी जीव का सच्चा संगी नहीं है, इनमें से तो कोई भी जीव के संग जाने वाला नहीं है। जीव का सच्चा संगी साथी और उसका संग साथ निभाने वाला तो परमात्मा है, परमात्मा की भक्ति है, उसका नाम है। माया की असत् रचना में तथा संसार के मिथ्या धन्धों में खप खप कर सारा संसार मरा जा रहा है, किन्तु जो

कुछ भी वह दिन रात एक करके एकत्र कर रहा है, वह सब उसके किसी काम आने वाला नहीं है, क्योंकि परमात्मा के नाम के सिवा जीव से अन्य सब कुछ आगे अर्थात परलोक मार्ग में छीन लिया जायेगा। वहां तो केवल नाम ही जीव का साथ दे सकेगा। सबके प्रेरक परमात्मा को भुलाकर तो जीव को दुःख कष्ट और क्लेश ही भोगने पड़ेंगे, क्योंकि परमात्मा के नाम के सिवा दूसरा कोई भी जीव का परलोक में सहायक नहीं है। जिन्होने अपनी सुरति को परमात्मा के चरणों में लगाया है, उनकी परमात्मा के दरबार में निर्मल शोभा है, दरबार में उनका मुख उज्जवल है। सतपुरुष कहते हैं कि हे प्रभो! यदि आपसे मिलन हो जाये तभी मेरी वास्तविक उपलब्धि हुई अर्थात फिर मुझे मानो सब कुछ मिल गया, कुछ भी प्राप्तव्य शेष नहीं रहा। वैसाख का महीना तभी सुहावना है जब जीव की सत्पुरुषों से भेंट हो और वे जीव का परमात्मा से मिलने करा दें।

यह जीव परमपिता परमात्मा का अंश है। परमात्मा चूंकि आनन्दस्वरूप हैं, सुखराशी हैं, इसलिए परमात्मा का अंश होने के नाते नियमानुसार तो जीव में भी वही गुण होने चाहियें अर्थात उसे भी सुख आनन्द से भरपूर होना चाहिए, परन्तु यदि हम संसार की ओर देखें तो यही देखने में आता है कि प्रत्येक जीव सुख आनन्द से वंचित है। वह हर समय दुःखी रहता है, परेशान रहता है। कारण इसका यह है कि माया के धोखे में आकर वह अपने अंशी परमात्मा को विस्मृत कर बैठा है। परमात्मा को भुलाकर यदि कोई सुख और आनन्द प्राप्त करने की अभिलाषा करे, तो उसकी यह अभिलाषा कभी भी पूरी नहीं हो सकती।



परमात्मा की याद को, उनके नाम को भुलाकर तो दुःख, कष्ट और विपदायें ही पल्ले पड़ेंगी, जैसा कि सत्पुरुषों ने फरमाया हैः-

विपति तहां जहां हरि सिमरनु नाहीं। कोटि अनंद जह हरि गुन गाही।।
हरि विसरिऐ दुख रोग घनेरे। प्रभ सेवा जमु लगै न नेरे।।

अर्थः- वहीं विपदायें हैं, वहीं कष्ट क्लेश हैं, यहां परमात्मा के नाम का सुमिरण नहीं है और जहाँ परमात्मा की गुण-स्तुति गाई जाती है, उनका भजन सुमिरण होता है,वहां करोड़ों ही आनन्द हैं। यदि मनुष्य को परमात्मा का नाम विस्मृत हो जाये तो उसे अनेकों ही दुःख और मानसिक रोग आकर घेर लेते हैं। जबकि प्रभु की सेवा भक्ति करने से यम भी निकट नहीं आता।

जब तक जीव परमात्मा का भजन-ध्यान नहीं करता, उनके चरणों के साथ अपने चित्त का सम्बन्ध नहीं जोड़ता, तब तक उसकी सुरित अपने अंशी परमात्मा से बिछुड़ी रहती है और उसका नाता परमात्मा से टूटा रहता है, फलस्वरूप जीव निर्बल,असहाय और अशक्त हो जाता है। जिस प्रकार जल की बूँद अपने भण्डार समुद्र से बिछुड़ कर निर्बल और शक्तिहीन हो जाती है, उसी प्रकार ही जीव भी अपने अंशी से विलग होकर निर्बल और अशक्त हो जाता है। तब काम,क्रोध,लोभ मोह, अहंकार, मत्सर,ईर्ष्या, द्वेष आदि शत्रु जीव पर हावी हो जाते हैं। और उसे अपने चंगुल में दबोच लेते हैं। शत्रुओं का काम ही चूँकि दुःखी और परेशान करना होता है, इसलिए काम क्रोधादि के पंजे में आया हुआ जीव सदा दुःखी, अशान्त और परेशान रहता है। किन्तु जब जीव अपने हृदय में परमात्मा का नाम, उनका ध्यान बसा लेता है और इस

प्रकार अपनी सुरति का सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ लेता है, तब उसकी आत्मा सबल एवं सशक्त हो जाती है और तब काम क्रोधादि शत्रुओं का जीव पर दाँव नहीं चलता और न ही वे उसे दुःखी और परेशान कर पाते हैं, फलस्वरूप वह सर्वदा सुख तथा आनन्द से भरपूर रहता है। भक्त विभीषण जी भगवान श्री रामचन्द्र जी के श्री चरणों में विनय करते हुए कहते हैः-

तब लगि कुसल न जीव कहूं, सपनेहूँ मन विश्राम।।
जब लगि भजन न राम कहूँ, सोक धाम तजि काम।।
तब लगि हृदय बसत खल नाना। लोभ मोह मत्सर मद माना।।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरे चाप सायक कटि भाथा।।
ममता तरून तमी अँधियारी। राग द्वेष उलूक सुखकारी।।
तब लगि बसत जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं।
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे।।
तुम्ह कृपाल जा पर अनूकूला। ताहि ने व्याप त्रिविध भव सूला।।

अर्थः- तब तक जीव की कुशल नहीं है और तब तक स्वप्न में भी उसके मन को सुख शान्ति नहीं है, जब तक वह शोक के घर काम अर्थात विषय वासनाओं को छोड़कर भगवान की भजन भक्ति नहीं करता। लोभ, मोह, मत्सर, मद और मान आदि अनेकों दुष्ट तभी तक जीव के हृदय में बसते हैं, जब तक भगवान हृदय में नहीं बस जाते। मोह ममता पूर्ण अन्धकारमय रात्री है, जो राग द्वेष रूपी उल्लुओं को सुख देने वाली है। वह ममता रूपी रात्रि तभी तक जीव के हृदय में विद्यमान रहती है, जब तक प्रभु का प्रताप रूपी सूर्य उदय नहीं होता।



हे प्रभो! आपके चरणारविन्दों के दर्शन कर अब मैं कुशल से हूं और मेरे भारी भय मिट गये हैं। हे कृपालु! आप जिस पर अनुकूल होते हैं, उसे तीनों प्रकार के भवःशूल अर्थात तीनों प्रकार के ताप (आध्यामत्मिक,आधिदैविक तथा आधिभौति) नहीं व्यापते।

विभिषण जी के इस कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जब जीव भगवान की शरण ग्रहण करेगा, उनके नाम का सुमिरण करेगा, उनके चरणों के साथ अपनी सुरति का सम्बन्ध जोड़ेगा, तभी वह सुखी हो सकेगा। किन्तु आम संसारी मनुष्य बिल्कुल इसके उलट कर रहा है। माया के धोखे में आकर वह अपने अंशी परमात्मा को भुला बैठा है। अपनी सुरति का सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ने की बजाये उसने अपना सम्बन्ध संसार के असत् धन-पदार्थों तथा स्त्री पुत्र आदि शारीरिक नातों से जोड़ रखा है, फिर उसे सुख मिले तो कैसे? माया काया तथा उनसे सम्बन्धित पदार्थों तथा सम्बन्धों के साथ अपनी सुरति जोड़कर और इनकी प्राप्ति में अपने अनमोल जीवन को लगा कर वह जीवन पर्यन्त भी दुःखी और अशान्त रहता है और आगे भी दुःख पाता है, क्योंकि इनमें से कोई भी चीज़ मनुष्य के साथ नहीं जाती। यही मनुष्य की अज्ञानता और भूल है कि परमात्मा जो लोक परलोक में संग सहाई हैं, उनके नाम का तो वह स्मरण नहीं करता, उनसे तो वह प्रीति नहीं करता और जो पदार्थ साथ छोड़ जाने वाले हैं, जो अविश्सनीय और धोखा दे जाने वाले हैं, उन पदार्थों और सम्बन्धों की प्रीति को उसने दिल में बसा रखा है। और दिन रात उन्हीं के लिये प्रयत्न एवं पुरुषार्थ करता है।संसारी मनुष्य की इस अज्ञानपूर्ण अवस्था का वर्णन करते हुये

सत्पुरुष फरमाते हैं किः-

रतनु तिआगि कउडी संगि रचै। साचु छोडि झूठ संगि मचै।।
जो छडना सु असथिरु करि मानै। जो होवनु सो दूरि परानै।।
छोडि जाइ तिसु का स्रमु करै। संगि सहाई तिसु परहरै।।

अर्थःआम संसारी मायाग्रस्त जीव परमात्मा के नाम रूपी रत्न को छोड़कर माया रूपी कौड़ियों में रचा पचा रहता है। परमात्मा का नाम जो सत्य वस्तु है, उसे छोड़कर वह असत धन पदार्थो और असत शारीरिक सम्बन्धों में आसक्त रहता है। जिन माया के सामानों शरीर के भोग पदार्थों और रिश्ते नातों को उसने छोड़ जाना है, उन्हें तो वह स्थिर मानता है और जो परमात्मा का नाम सदा स्थिर है,सदा रहने वाला है, उससे दूर भागता है।जिन पदार्थों को एक दिन छोड़ जाना है, उनके लिए तो दिन रात परिश्रम करता है और जो सदा संग साथ रहने वाला और लोक परलोक का संग सहाई परमात्मा का नाम है, उसे छोड़े बैठा है।

यह कितनी अज्ञानता है? किन्तु इस अज्ञानता में जीवन व्यतीत करने का परिणाम क्या होगा? यही कि संसार के धन पदार्थ तथा शारीरिक रिश्ते नाते तो उसे एक न एक दिन धोखा देंगे ही, वे तो उसका साथ छोड़ेंगे ही और परमात्मा का नाम चूँकि उसने भुलवा रखा है, वह इसके साथ होगा नहीं जो उसे नारकीय यातनाओं और चौरासी लाख योनियों के दुःखों कष्टों से बचाये फल यह होगा कि तब वह आठ आठ आँसू रोयेगा और पछतायेगा, परन्तु उस समय रोने और पश्चाताप करने से क्या होता है? सत्पुरुष तो स्पष्ट शब्दों में चेतावनी देते हुए फरमातें हैं किः-



संगि न चालसि तेरै धना। तूं किया लपटावहि मूरख मना।।
सुत मीत कुटंब अरु बनिता। इन ते कहहु तुम कवन सनाथा।।
राज रंग माइया बिसथार। इन ते कहहु कवन छुटकार।।
असु हसती रथ असवारी। भूठा डंफु झूठु पासारी।।
जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना। नाम बिसारि नानक पछुताना।।

अर्थः- हे मूर्ख मन! संसार का असत धन तेरे साथ नहीं जायेगा, फिर तू क्यों उसके साथ लिपटता है और अपनी सुरित उसमें अटकाता है? पुत्र ,मित्र स्त्री तथा अन्य कुटम्बी जन इनमें से बता कौन तेरा साथ देने वाला है? राज्य, संसार के रंग तमाशे तथा माया का अन्य जितना भी विस्तार है, उनके साथ चित्त का सम्बन्ध जोड़ने से क्या तुझे जन्म मरण के चक्कर और उसके दुःखों से छुटकारा मिल सकता है? घोड़े, हाथी, रथ तथा अन्य सवारियाँ -ये सब तो असत एवं नाशवान हैं। यह सब तो झूठा आडम्बर और झूठा पसारा है। सत्पुरुष फरमातें है कि जिस परमेश्वर ने तुझे ये सारे पदार्थ दिये हैं, उसके साथ तो तू पहचान नहीं करता, उसे तो तूने बेगाना समझ रखा है। इसका परिणाम क्या होगा? यही कि परमात्मा को भुलाने के फलस्वरूप अन्त में तुझे पश्चाताप करना पड़ेगा। ऐसे ही वचन सन्त सहजोबाई जी ने भी फरमाये हैं।

हरि बिनु तेरौ न हितु, कोई या जग माहीं।।
अन्त समय तू देखि ले, कोइ गहै न बाहीं।।
जम सूँ कहा छुटा सकै, कोइ संग न होई।।
नारी हु फटि रहि गई, स्वारथ कूँ रोई।।
पुत्र कलित्तर कौन के, भाई अरू बन्धा।।

सब ही ठोक जलाइ हैं, समझै नहिं अन्धा।।
महल दरब ह्याँ ही रहै, पचि पचि करि जोड़ा।।
करहा गज ठाढ़े रहैं, चाकर और घोड़ा।।
पर काजै बहु दुःख सहै, हरि सुमिरन खोया।।
सहजो बाई जम घिरै सिर धुनि धुनि रोया।।
(सिकन्दर की मिसाल,दुनीचन्द की मिसाल)

मनुष्य स्वयं मन में विचार करे कि जिस काम को करने पर बाद में रोना और पछताना पड़े, क्या उस काम को करना कोई बुद्धमानी की बात है? कदापि नहीं। फिर क्यों न मनुष्य विवेक से काम ले और अविश्सनीय तथा बेवफा धन पदार्थों तथा शारीरिक सम्बन्धियों के साथ सुरति का नाता जोड़ने की बजाय परमात्मा के साथ चित्त का सम्बन्ध जोड़े, स्वाँस स्वाँस में परमात्मा के नाम का सुमिरण करे, जो लोक परलोक में सदा संग साथ रहने वाला है।

अभिप्राय ये कि संसार सागर से पार करते समय पता चलता है कि राजा वस्तुतः कौन है और कौन सुख तथा सम्मान से भवसागर से पार होता है? वे जिनके पास संसार के धन पदार्थ प्रचुर मात्रा में हैं, जिन्होंने इन्ही को प्राप्त करने में अपना जीवन व्यतीत किया अथवा वे जिन्होने चित्त का सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ कर नाम का सच्चा धन कमाया। वास्तव में वहां सुख और सम्मान उन्हीं को प्राप्त होता है और उन्हीं को आदर सहित पार ले जाया जाता है, जिनके पास नाम का सच्चा धन होता है। किन्तु स्मरण रहे कि मालिक के नाम की प्राप्ति पूर्ण सतगुरु के कृपा से ही सम्भव है। पूर्ण सदगुरु ही सच्चे नाम के दाता हैं और



मनुष्य को नाम की दात बख्श सकते हैं, जिसका सुमिरण करने से जन्म जन्मान्तर की बिछुड़ी सुरति अपने अंशी परमात्मा से मिलकर एक रूप हो जाती है और नित्य सुख, शाश्वत आनन्द और परमशान्ति को प्राप्त करती है। इसलिये यदि मनुष्य अपना कल्याण चाहता है, तो उसे चाहिये कि पूर्ण सदगुरु की शरण संगति ग्रहण करे और तन मन से उनकी सेवा करके उन्हें प्रसन्न करे जिससे कि वे प्रसन्न होकर नाम की सच्ची दात प्रदान करें। जिसका सुमिरण करके जीव का लोक और परलोक सँवर जाये।

## ज्येष्ठ मास की सन्क्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैं किः-

माहु जेठु भला प्रीतमु किउ बिसरै।।
थल तापहि सर भर साधन बिनउ करै।।
धन बिनउ करेदी गुण सारेदी गुण सारी प्रभ भावा।।
साचै महलि रहै बैरागी आवण देहि त आवा।।
निमाणी निताणी हरि बिनु किउ पावै सुख महली।।
नानक जेठि जाणै तिसु जैसी करमि मिलै गुण गहिली।।

उपरोक्त शब्द में ''कान्त-भाव'' दरसाया गया है। इस भाव के अभिभूत जीवात्मा सर्वेश्वर परमात्मा को अपना प्रियतम और स्वयं को परमात्मा की प्रियतमा के रूप में देखती है। जीवात्मा रूपी स्त्री अपने प्रियतम परमात्मा के चरणों में विनय करती है कि हे प्रियतम! जयेष्ठ मास में मैं भला तुम्हें क्योंकर भूल सकती हूँ। ज्येष्ठ की गर्मी से जैसे धरती भट्ठी के समान तपने लगी है, वैसे ही तुम्हारे वियोग में मेरा हृदय भी तप रहा है,इसलिये हे प्रियतम! मैं तुमसे मिलने की विनय करती हूँ। जीव रूपी स्त्री प्रियतम परमात्मा के गुण स्मरण करती हुई विनती करती है जिससे कि परमात्मा के गुणानुवाद गाते हुये वह प्रियतम को प्रिय लग सके। हे निर्लिप्त परमात्मन्! तुम अपने सच्चे महल में स्थित हो। वहां यदि तुम अपनी कृपा से मुझे आने दे, तभी मैं वहां आ सकती हूँ। अर्थात् तुम्हारी कृपा से ही मैं तुम्हारा सामीप्य प्राप्त कर सकती हूँ। हे प्रभो! मैं अनाश्रित और बलहीन हूँ, अतएव तुम्हारी कृपा के बिना किस प्रकार तुम्हारे सच्चे महल में पहुँच सकती हूँ और सुख प्राप्त कर



सकती हूँ? सत्पुरुष श्री गुरु नानकदेव जी ज्येष्ठ मास के वर्णन में फरमाते हैं कि यदि परमात्मा की कृपा हो जाए तो शुभ गुणों को धारण करके जीव रूपी स्त्री अपने प्रियतम परमात्मा को प्राप्त करने में सफल हो सकती है।और यह कार्य केवल मानुष शरीर द्वारा ही सम्भव है।

परमात्मा से मिलने के लिये महापुरुषों ने अपनी इस वाणी में,चार बातों की ओर संकेत किया है। पहली बात तो यह है कि मनुष्य के अन्दर तड़प अथवा व्याकुलता का होना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक मनुष्य के हृदय में प्रियतम परमात्मा से मिलने के लिये तड़प अथवा व्याकुलता न होगी, तब तक मिलाप असम्भव है। इसलिये हृदय में व्याकुलता और तड़प का होना अनिवार्य है। यह व्याकुलता परमात्मा के सच्चे महल तक पहुंचाने वाली और उससे मिलाने वाली सीढ़ी है, क्योंकि जब जीव के हृदय में परमात्मा से मिलने के लिए तड़प और व्याकुलता पैदा हो जाती है, तो फिर उसका चित्त सब ओर से हटकर केवल एक प्रियतम परमात्मा में ही एकाग्र हो जाता है। अन्य सब विचार उसके मन से निकल जाते हैं और केवल एक परमात्मा का ही विचार और ध्यान मन में रह जाता है। जब ऐसी स्थिती आ जाए, तो फिर समझो कि परमात्मा के दर्शन और मिलन में कोई देर नहीं। प्रेमी की व्याकुलता और तड़प में ऐसी ज़बरदस्त शक्ति होती है कि वह अभीष्ट वस्तु के अन्दर भी हलचल पैदा कर देती है। फकीरों का कथन हैः-

तिश्ना चू नालद कि कू आबे ग्वार।
आब हम नालद कि कू आँ आब ख्वार।।

अर्थः- जब कि प्यासा मनुष्य प्यास से व्याकुल होकर पुकार करता है

कि हाय! ठंडा पानी कहां है, तो उधर पानी भी व्याकुल होकर पुकारने लगता है कि वह पानी का आकाँक्षी कहां है। इसी प्रकार ही जब परमात्मा के दर्शन और मिलने के लिये जीव की व्याकुलता और तड़प अत्यधिक बढ़ जाती है, तो फिर परमात्मा भी उसे दर्शन देने के लिये व्याकुल हो उठते हैं। आवश्यकता है हृदय में सच्ची तड़प और लगन पैदा करने की। जैसे एक नन्हें बालक को अपनी माँ से बहुत प्यार होता है और वह एक पल भी माँ से बिलग होना नहीं चाहता। किन्तु माँ को घर का कामकाज भी करना है, इसलिये जैसे ही बच्चे की आँख लगती है वह उसे चारपाई या झूले में लिटाकर घर के काम में लग जाती है। कुछ देर बाद बच्चा जागता है और अपने को माँ की गोद से अलग पाकर मचलने और रोने लगता है। माँ की स्नेह भरी गोद में जाने के लिए वह व्याकुल हो उठता है और जब उसकी तड़प और व्याकुलता तीव्र रूप धारण कर लेती है, तो फिर माँ को उसके निकट जाने और उसे गोद में लेने के लिए विवश होना ही पड़ता है।

ठीक इसी प्रकार जब तक जीव मोह की नींद में सोया रहता है, तब तक परमात्मा से दूर और बिछुड़ा रहता है। किन्तु जब वह सत्पुरुषों के सदुपदेश सुनकर जाग जाता है और परमात्मा से मिलने के लिये व्याकुल हो उठता है, परमात्मा के दर्शन और मिलने की चाह जब व्याकुलता और तड़प का रूप धारण कर लेती है, तब उसकी यह तड़प परमात्मा को उसे दर्शन देने के लिये विवश कर देती है। परमात्मा के दर्शन और मिलन में देर तभी तक है, जब तक हृदय में तड़प और व्याकुलता पैदा नहीं हो जाती।



दूसरी बात जो परमात्मा से मिलने के लिए आवश्यक है और जिसकी ओर महापुरुषों ने अपनी वाणी में संकेत किया है वह यह है कि जैसे एक स्त्री अपने पति की प्रसन्नता प्राप्त हेतु हर समय पति का स्मरण ध्यान और उसके गुणों का बखान करती रहती है, उसी प्रकार जीव को भी चाहिये कि हर समय प्रियतम परमात्मा का स्मरण ध्यान करता रहे, उसकी गुण-स्तुति गायन करता रहे और इसकी महिमा के गीत सुनता रहे। सत्पुरुषों के वचन हैंः-

हरि खोजहु वडभागी हो मिलि साधू संगे राम।।
गुन गोविन्द सद गाईअहि पारब्रह्म कै रंगे राम।।
सो प्रभु सद ही सेवीऐ पाईअहि फल मंगे राम।।
नानक प्रभु सरणागती जपि अनत तरंगे राम।।
इकु तिलु प्रभू न वीसरै जिनि सभु किछुदीना राम।।
वडभागी मेलावड़ा गुरमुखि पिरु चीन्हा राम।।
बाहपकड़ि तम ते काढिआ करिअपुना लीनाराम।।
नामु जपत नानक जीवै सीतलु मनु सीना राम।।

अर्थः-हे सौभाग्यशाली जीवात्माओ!प्रभु प्रियतम की सन्त सत्पुरुषों की सहायता से खोज करो, तभी तुम उसे प्राप्त कर सकते हो। परमात्मा के प्रेम के रंग में रंग कर सदैव परमात्मा के गुणों का गायन करो। उस परमात्मा की सदा सेवा करो, जिसकी सेवा से मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं। सत्पुरुष फरमाते हैं कि परमात्मा की शरण ग्रहण कर मन से अन्य समस्त तरंगों अर्थात् विचारों को दूर कर एकाग्रचित्त होकर परमात्मा के नाम का स्मरण करना चाहिये।

जिस परमात्मा ने सब कुछ दिया है, उसे एक क्षण के लिये भी विस्मृत नहीं करना चाहिये। सौभाग्य से जब सद्गुरु का मिलाप होता है, तब उनके सदुपदेश तथा उनकी कृपा से जीव प्रियतम परमात्मा को पहचान लेता है और तब परमात्मा बाँह पकड़ कर जीव को अज्ञान अन्धकार से निकाल लेता है और उसे अपना बना लेता है। सत्पुरुष फरमाते हैं कि हम परमात्मा का नाम स्मरण करके ही जीते हैं, जिससे मन चित्त शान्त शीतल होता है।

तीसरी बात जो परमात्मा से मिलने के लिये आवश्यक है वह यह कि परमात्मा को ही अपना एकमात्र आश्रय और सहारा जानकर मिलन और दर्शन के लिये जीव हर समय प्रार्थना करता रहे।

मेरे साहा मैं हरि दरसन सुखु होइ।।
हमरी बेदनि तू जानता साहा अवरु किआ जानै कोइ।।

ऐ मेरे स्वामी!मुजे तो तेरा दर्शन करके ही सच्चा सुख प्राप्त होगा। मेरी विरह वेदना को तू ही भलीभांति जानता है। दूसरा कोई मेरे दर्द को क्या जान सकता है?

साजन अब तो मम सुधि लीजै हो।।
तुम बिन मेरे और न कोई कृपा रावरी कीजै हो।।
मैं तो दासी थाँरे चरण की बेगहि दरसन दीजै हो।
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर मिल बिछुरन नहिं कीजै हो।।

यह प्रार्थना हर समय जीव इष्टदेव परमात्मा के चरणों में करता रहे, जैसी प्रार्थना मीराबाई जी कर रही हैं कि हे प्रियतम!अब तो मेरी सुधि लीजिये। तुम्हारे बिना मेरा और कोई नहीं है, इसलिए अपनी कृपा



कीजिये। मैं तो तुम्हारे चरणों की दासी हूँ, इसलिये शीघ्र ही मुझे दर्शन दीजिये। मीराबाई जी विनय करती हैं कि हे प्रभो! मिलकर अब मुझ से बिछुड़ना नहीं।

चौथी बात तो परमात्मा से मिलने के लिए आवश्यक है, वह यह कि जैसे एक सुहागिन स्त्री अपने पति की प्रसन्नता पाने के लिए और उसे रिझाने के लिये ऋंगार करती है, वैसे ही परमात्मा को रिझाने के लिये जीव को भीअपना ऋंगार करना होगा। किन्तु कैसे? शुभ गुणों से, क्योंकि परमात्मा को शुभ गुण धारण करके ही प्रसन्न किया जा सकता है और उसकी निकटता प्राप्त की जा सकती है। जीव को किस प्रकार का ऋंगार करना चाहिये, इस विषय में हमारे परम आराध्यदेव, पूज्यपाद श्री श्री 108 श्री परमहंस दयाल जी प्रायः यह भजन गाया करते थेः-

टेकः-करहूँ मैं भक्ति सिंगार नाथ महारानी होइयों।।

1.सत्य के सिन्दूर इंगुर, सुकृत मन्द्रा काजल देहयों।
माँग टीका त्रिकुटी लौ लागे,दर्शन हरि जी के पइयों।।

2.बाजूबन्द ज्ञान दृढ़ तिलड़ी, नथिया बुध चमकइयों।
मन कर बिंदी सन्तोष की चूड़ी, पिय हिय हर क्षण रहियों।।

3.दया के कंगन अक्रोध पछैली, धर्म की हँसली पहनइयों।
कनक फूल अनहद बाजत, बीसर विषय झुलइयों।।

4.सार सुर्त की अंगिआ साज के, सुमति की साड़ी ओढ़इयों।
सहज समाधि बुद्धि चित्त लहंगा, पल में पिया को रिझइयों।।

5.'रामयाद' प्यारी पिया हो के, सौती माया तमकइयों।
सुहागिन होके पिया के रिझाई, रज तम मैल दुरइयों।।

करहूँ मैं भक्ति सिंगार, नाथ महारानी होइयों।।

इस भजन में भी कान्तभाव दरसाया गया है और यह दिखाया गया है कि जिस प्रकार प्रेयसी अपने पिया के रिझाने को ऋंगार करती है,उसी प्रकार अनुरागी जीवात्मा भी प्रियतम परमात्मा की प्रसन्नता प्राप्ति हेतू शुभगुणों के दिव्य आभूषणों को धारण करके अपना ऋंगार करती है। इसे भक्ति-ऋंगार कहते हैं जैसा कि भजन की प्रथम पंक्ति में वर्णन है। भजन का भावार्थ इस प्रकार है।

''हे प्रभु प्रियतम! हे नाथ! मेरी यह उत्कट अभिलाषा है कि मैं भक्ति ऋंगार करके आपकी प्रेयसी अथवा महारानी बनने का सौभाग्य प्राप्त करूँ।''

1. इंगुर अथवा सिन्दूर मैं सत्य का लगाऊँ और शुभकर्मों का सुन्दर काजल नेत्रों में लगाऊँ। त्रिकुटी स्थान में मेरी सुरति एकाग्र होकर ठहरे, यही मेरी माँग का टीका हो। इस प्रकार ऋंगार कर मैं नित्य अपने प्रियतम परमात्मा के दर्शन पाऊँ।

2. ज्ञान का तीन लड़ियों वाला हार पहनूँ, जिसमें कर्तव्य ज्ञान, अनुभव ज्ञान और शुद्ध परमतत्व ज्ञान रूपी तीन लड़ियां हों। शुद्ध बुद्धिरूपी चमकीली नथ धारण करूँ। अचल मन माथे की बिंदिया हो। भाव यह कि तीसरे तिल में मन एकाग्र होकर स्थिर रहे। सन्तोष की चूड़ीयाँ धारण करूँ। इस प्रकार पिया को भा जाने से हर क्षण प्रियतम के हृदय में निवास करूँ।

3. कलाइयों में दया के कंगन तथा अक्रोध(अर्थात् क्षमा)रूपी पिछेली(हाथ में पीछे पहनने का एक गहना) पहनूँ और गले में धर्म की



हँसली धारण करूँ। कानों में बजने वाले अनाहत शब्द ही मेरे कर्णफूल हों। जिनकी मधुर ध्वनि में लीन होकर मैं संसार के सभी विषयों को भूल जाऊं और आनन्दमग्न होकर झूमने लगूँ।

4.सार सुरति अर्थात् शुद्ध सुरति रूपी अँगिया सजाऊँ और निर्मल बुद्धि की साड़ी ओढ़ूँ इसका भाव यह है कि सुरति को जो अनेक जन्मों के मलिन संस्कार लिपटे हुये हैं,उन्हें शब्दाभ्यास द्वारा धोकर सुरति को शुद्ध कर लेना-यह अँगिया धारण करना दरसाया गया है तथा मलिन संस्कारों के नष्ट होने से बुद्धि में जो निर्मलता आती है-यह जीवात्मा की सुन्दर साड़ी है। इन मलिन संस्कारों के नष्ट हो जाने से निर्मल बुद्धि सहज समाधि मेंअतिशीघ्र लीन होगी।इसअंगियाऔर साड़ी के साथ एकाग्र चित्त रूपी लहंगा धारण करके मैं शीघ्र ही अपने प्रियतम प्रभु को रिझा लूँगी।

5. (श्री 'रामयाद' श्री परमहँस दयाल जी का प्रथम नाम) फरमाते हैं कि इस प्रकार भक्ति ऋंगार करके और शुभगुणों के आभूषम एवं वस्त्रों से सुसज्जित होकर मेरी आत्मा माया रूपी सौतिन के छल-बल को परास्त करने में सफल होगी तथा रज-तम आदि की सब मैल दूर करके मैं अपने प्रियतम की प्रिया बनकर उन्हें रिझाने में सफल होऊंगी।''हे नाथ! मेरी यही प्रार्थना है कि आप मुझे ऐसी शक्ति प्रदान करें, जिससे मेरी यह अभिलाषा पूर्ण हो कि भक्ति सम्बन्धी ऋंगार करके मैं आपकी महारानी बनूँ।''परमात्मा को प्राप्त करने के लिये उपरोक्त चार बातों पर आचरण करना आवश्यक है। यदि हम ऐसा जीवन बना लेंगे, तो फिर निश्चित रूप से ही इस जीवन में परमात्मा-प्राप्ति करके अपना जन्म सफल और धन्य कर सकेंगे।

## आषाढ़ मास की सन्क्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैंः-

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि।
जग जीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस।।
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पई सु जम की फास।।
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु।।
रैणि विहाणि पछुताणी उठि चली गई निरास।।
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु।।
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस।।
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नहीं नानक की अरदासि।।
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास।।

भावार्थः-आषाढ़ मास के वर्णन में महापुरुष फरमाते हैं कि आषाढ़ का महीना उन्हीं जीवों को तपता हुआ लगता हैअर्थात् उन्हीं को कष्ट कलेश देने वाला होता है, जिनके हृदय में परमेश्वर का निवास नहीं है और जो जगत के जीवन-दाता परमेश्वर का आस-भरोसा त्यागकर मनुष्य का आस भरोसा रखते हैं। परमेश्वर की बजाय अन्य भावों (अर्थात माया काया के विचारों) को हृदय में बसाने के कारण ही मनुष्य दुःखी और परेशान होता है तथा यम की फांस उसके गले में पड़ती है। किन्तु इसमें दोष तो उसका अपना ही है, क्योंकि प्राकृतिक नियमानुसार जो जैसा कर्मों का बीज बोता है,वैसा ही फल भी प्राप्त करता है और वैसा ही लेख उसके मस्तक पर लिखा जाता है। परमेश्वर को भुलाने वाले जीव की जीवन रूपी रात्रि जब बीत जाती है, तब वह पछताता और रोता है



तथा संसार से निराशापूर्वक चला जाता है। इसके विपरीत जिन जीवों का सत्पुरुषों से मिलाप हो जाता है,वे सब बन्धनों से मुक्त और उज्जवलमुख होकर प्रभु दरबार में जाते हैं। महापुरुष विनय करते हैं कि हे प्रभो! ऐसी कृपा कर जिससे कि हृदय में केवल तेरे दर्शनों की प्यास बनी रहे। हे प्रभो! तेरे बिना जीव का सच्चा साथी और कोई भी नहीं है। अन्त में फरमाते हैं कि जिस जीव के हृदय में परमेश्वर के चरणों का निवास है अर्थात् जिसने अपने हृदय में परमेश्वर के चरणकमल बसा रखे हैं, उसे आषाढ़ मास भी सुहावना लगता है।

जीव परमपिता परमात्मा का अंश है, इस नाते जीव का वास्तविक स्वरूप सुखमय एवं आनन्दमय है, परन्तु संसार की ओर हम यदि देखें तो संसारी मनुष्य हर समय आषाढ़ के महीने की तरह तपता रहता है, वह दुःख,कलपना और अशान्ति का शिकार बना रहता है। ऐसा इसलिये है कि अपने अंशी परमात्मा को भुलाकर उसने माया,काया तथा उनसे सम्बन्धित पदार्थों को हृदय में बसा रखा है और उनके साथ अपने चित्त का सम्बन्ध जोड़ रखा है। भगवान को भुलाकर यदि कोई सुख चाहे तो यह कदापि सम्भव नहीं, उसके पल्ले तो दुःख ही पड़ेगा। श्री रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में वर्णन है किः-

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी।।

अर्थः- जो मालिक परमात्मा को सुखों का धाम जानते हुये भी उसे भुला देते हैं, वे दुःखी होकर क्यों न भटकेंगे? जब तक मनुष्य सांसारिक कामनाओं को त्यागकर भगवान का भजन सुमिरण नहीं करेगा, उनके साथ सम्बन्ध नहीं जोड़ेगा, तब तक न तो उसे सुख शान्ति प्राप्त हो

सकती है और नही यम के हाथों उसकी कुशल है।

तब लगि कुसल न जीव कहुँ, सपनेहूं मन विश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ,सोक धाम तजि काम।।

अर्थः-तब तक जीव की न तो कुशल है और न ही स्वपन में उसके मन को शान्ति है, जब तक वह शोक के घर संसार की कामनाओं को त्यागकर भगवान का भजन सुमिरण नहीं करता। किन्तु इस बात की समझ मनुष्य को तभी आती है,जब सौभाग्य से सत्पुरुषों से उसका मिलाप हो जाता है, तब वह परमात्मा को हृदय में बसाता है, सुखराशि परमात्मा से चित्तवृत्ति जुड़ी रहने के कारण उसका तन मन शान्त शीतल बना रहता है। उसका जीवन भी सुख आनन्द से व्यतीत होता है और परलोक भी सँवर जाता है।



## सावन मास की संक्रान्ति

सत्पुरुषों के वचन हैंः-

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु।।
मन तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु।।
विखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु।।
हरि अंमृत बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु।।
वणु तिणु प्रभ संगि मुउलिआ संम्रथ पुरख अपारु।।
हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु।।
जिनि सखीए प्रभ पाइआ हँउ तिन कै सद बलिहार।।
नानक हरि जी मइआ करि सबद सवारणहारु।।
सावणु तिना सुहागणी जिन राम नामु उरि हारु।।

श्रावण मास का वर्णन करते हुये सत्पुरुष फरमाते हैं कि जिस जीवात्मा रूपी स्त्री का परमात्मा के चरण कमलों में सच्चा प्रेम है, वही आनन्द से भरपूर रहती है, क्योंकि उसका तन-मन प्रभु प्रेम के रंग में रंगा रहता है, उसे केवल परमात्मा के नाम का ही आधार है। संसार के समस्त विषयभोग कड़ुवे तथा नष्ट हो जाने वाले हैं। परमात्मा का नामअंमृत की बूंद के समान सुहावना, मधुर तथा प्राणदायक है, परन्तु इसका पान सन्तों सत्पुरुषों की संगति में ही किया जा सकता है। प्रभु अपार सामर्थ्य वाला है, जिसकी कृपा से वन में वृक्ष एवं पौधे प्रफुल्लित होते हैं। यदि जीव भी उसके साथ अपना सम्बन्ध जोड़ ले और उसकी कृपा का अधिकारी बन जाये, तो वह भी सदा प्रफुल्लित रह सकता है। सत्पुरुष फरमातें हैं कि परमात्मा से मिलने को मन बहुत चाहता है,

परन्तु यह मिलन शुभकर्मों के प्रताप से अथवा उत्तम भाग्य से ही हो सकता है। जिन पुण्यशील आत्माओं ने परमात्मा को पाया है, मैं उन पर सदा बलिहारी जाता हूँ। परमेश्वर जीवों पर दया करके सद्गुरु रूप में सार शब्द की दात बख्शते हैं और जीवों का जीवन संवारते हैं। श्रावण मास उन सुहागिनी अर्थात् प्रभु की प्यारी आत्माओं के लिये ही आनन्ददायक है, जिन्होने परमात्मा के नाम को हृदय में धारण किया है।

ग्रीष्म ऋतु का अन्त हुआ जिसकी तपश से कण कण झुलस रहा था। ऐसा प्रतीत होता था, मानों चारों ओर आग बरस रही हो। गर्मी से हर प्राणी बेचैन था, व्याकुल था। और अब वर्षा ऋतु के आने से गर्मी का ज़ोर कम हुआ धरती शान्त शीतल हुई, सूखे हुये पेड़ पौधों में जान आई, चारों ओर हरियाली ही हरियाली छा गई। नदियाँ झूम झूमकर चलने लगीं। इस प्रकार वर्षा ऋतु के आगमन पर प्रकृति आनन्द में झूम उठी। किन्तु प्रश्न उत्पन्न होता है कि वर्षा ऋतु के आगमन से प्रकृति के कण कण में जो खुशी और आनन्द का संचार हुआ, वैसा ही आनन्द और खुशी का संचार क्या संसारी मनुष्य के हृदय में भी हुआ? श्रावण मास के आगमन पर जैसे पेड़ पौधे प्रफुल्लित हुये, वैसे ही क्या संसारी मनुष्य का हृदय भी प्रफुल्लित हुआ? उत्तर मिलेगा कि नहीं। क्यों? इसलिये कि मनुष्य के हृदय में सुख एवं आनन्द का संचार करने वाली, उसकी आत्मा को प्रफुल्लित करने वाली वस्तु कोई और ही है। मनुष्य की शारीरिक अथवा बाहरी तपन तो निस्सन्देह वर्षा के जल से दूर हो जाती है, परन्तु मनुष्य के हृदय में जो दुःखों, चिंताओं तथा कल्पनाओं आदि की तपन है, वह तपन तो वर्षा के जल से शान्त नहीं होती और



जब तक उसे हृदय की यह तपन और जलन शान्त शीतल नहीं होगी, तब तक वह सुखी एवं आनन्दित कैसे हो सकता है? उसका हृदय सच्ची खुशी से भरपूर क्योंकर हो सकता है? हृदय में विद्यमान दुःख, अशान्ति और चिंताओं की यह तपन कैसे दूर होगी, इसका उपाय महापुरुषों ने अपनी वाणी में बतला दिया है कि मनुष्य प्रभु चरणों से प्रेम प्यार का नाता जोड़े, अपना तन मन प्रभु प्रेम के सच्चे रंग में रंग ले, प्रभु नाम को हृदय में बसा ले। जिससे दुःखों, चिंताओं तथा कलपनाओं की जलन शान्त हो जायगी और सच्ची खुशी, सच्चे आनन्द का उसके रोम रोम में संचार होगा। किन्तु प्रभु प्रेम का यह सच्चा और गूढ़ा रंग तभी मनुष्य पर चढ़ता है और तभी उसके हृदय में नाम का निवास होता है जब वह पूर्ण सद्गुरु की शरण ग्रहण कर गुरु शब्द को हृदय में धारण करता है। सत्पुरुषों के वचन हैंः-

हरि रंगि राता मनु रंग माणे।
सदा अनंदि रहै दिन राति पूरे गुर कै सबदि समाणे।

अर्थः- जो मनुष्य प्रभु प्रेम के रंग में रंगा रहता है, उसी का मन सच्चा आनन्द अनुभव करता है। सद्गुरु के शब्द में लीन रहते हुये वह सदा दिन रात आनन्दमग्न रहता है।

किन्तु आम संसारी मनुष्यों की क्या दशा है? यही कि वे हर समय दुःखों, चिंताओं और कल्पनाओं की तपन से झुलसते रहते हैं। यह एक या दो की दशा नहीं, आम संसार की यही दशा है। शेख फरीद साहिब का कथन हैः-फरीदा मैं जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि।

ऊचे चढ़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि।।

एक संसारी मनुष्य की दशा का वर्णन करते हुये शेख फरीद साहिब फरमाते हैं कि आम संसारी मनुष्य यही समझता है कि संसार में केवल मैं ही दुःख, अशान्त और परेशानी में ग्रस्त हूं परन्तु दुःखी और अशान्त तो सारा संसार ही है। अपनी स्थिति से ऊपर उठकर देखने से पता चला कि दुःख की ज्वाला तो घर घर में जल रही है। यद्यपि सभी मनुष्य चाहते नित्य सुख, शाश्वत आनन्द एवं परम शान्ति हैं और इसी के लिये ही वे दिन रात प्रयत्न एवं पुरुषार्थ भी करते हैं, परन्तु फिर भी दुःख एवं अशान्ति ही उनके पल्ले पड़ती है। एक कवि लिखता हैः- गदा है या कोई बादशाह है। जिसे भी देखो वो गमज़दा है।

कोई भी इंसाँ नहीं है ऐसा जो बज़्मे-दुनियाँ में मुस्कराये।।

अर्थः- चाहे कोई फकीर है या राजा, जिसे भी देखो वह दुःखों-गमों से भरा हुआ है। संसार रूपी सभा में ऐसा कोई भी मनुष्य दिखाई नहीं देता, जो कि हर्ष से युक्त हो, जिसकी मुस्कराहट असली हो। आम संसारी लोगों की मुस्कराहट तो झूठी मुस्कराहट है, जिसके पीछे हज़ारों-लाखों चिंतायें छिपी हुई हैं, जैसा कि कथन हैः-

जिह्वा पर हैं गीत मधुर पर दिल में दुःख घनेरे।
ओठों पर मुस्कान मगर लाखों चिंतायें घेरे।।
झूठी हँसी के पीछे देखो छिपा है हाहाकार।।

किन्तु इसका कारण क्या है? जबकि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में अभिलाषा सुख एवं आनन्द की है और इसी के लिये वह प्रयत्न एवं पुरुषार्थ भी करता है, फिर भी उसे सुख आनन्द की प्राप्ति क्यों नहीं होती? उसे दुःख, अशान्त और कलपनाओं का मुख क्यों देखना पड़ता



है? कारण इसका यह है कि सुख एवं आनन्द के स्रोत परमपिता परमात्मा से उसने अपने चित्त का सम्बन्ध तोड़ रखा है। परमात्मा को वह पूरी तरह भूला हुआ है इसीलिये वह दुःखी और परेशान है।

नित नित खुसीआं मनु करे नित नित मंगै सुख जीउ।
करता चिति न आवई फिरि फिरि लगहि दुःख जीउ।।

अर्थः- मनुष्य का मन नित्यप्रति खुशी माँगता है, सुख माँगता है, परन्तु अपने चित में परमात्मा को नहीं बसाता, इसीलिये उसे बार बार दुःख की प्राप्ति होती है। आम संसारी मनुष्य जिसे सन्तों सत्पुरुषों की पावन संगति प्राप्त नहीं है और सतसंगति से वंचित रहने के कारण जिसे वास्तविकता का ज्ञान नहीं है, उसने अपने मन में परमात्मा के प्रेम तथा नाम को बसाने की अपेक्षा कड़ुवे एवं विषपूर्ण, शारीरिक भोगों तथा ऐन्द्रिक विषयरसों को बसा रखा है और हर समय उन्हीं को प्राप्त करने के यत्न में लगा रहता है, यह सोचकर कि उनमें उसे सच्चा सुख, सच्चा आनन्द उपलब्ध होगा। किन्तु शारीरिक भोगों तथा ऐन्द्रिक विषयरसों का प्रभाव ही चूंकि दुःख एवं अशान्ति उत्पन्न करने वाला है, इसलिये यही कुछ उसे प्राप्त होता है। शरीर इन्द्रियों के इन भोगों तथा विषय रसों से उसे न केवल दुःख एवं अशान्ति ही प्राप्त होती है, अपितु इनके निरन्तर उपभोग से वह आत्मिक मृत्यु को भी प्राप्त होता है। इस प्रकार उसे इस जीवन में तो दुःख,कष्ट एवं क्लेश भोगने ही पड़ते हैं, परलोक भी उसका दुःखमय बन जाता है।

इसलिये यदि मनुष्य सुख, आनन्द एवं शान्ति प्राप्त करने का अभिलाषी है,तो उसे चाहिये कि वह इन शारीरिक भोगों तथा ऐन्द्रिक

विषयरसों के पीछे भागने की बजाय परमात्मा के साथ अपने चित्त का सम्बन्ध जोड़े। परमात्मा का नाम अमृत तुल्य है। परमात्मा के साथ चित्त का सम्बन्ध जोड़ने तथा उनका भजन सुमिरण करने से जब जीव के हृदय में इस अमृत की बूंदें झरती हैं, तो उसके हृदय की सारी तपन समाप्त हो जाती है। उसका हृदय शान्त शीतल हो जाता है। और उसे सच्चे सुख,आनन्द एवं खुशी की प्राप्ति होती है। सत्पुरुषों के वचन हैंः-

भजन में होत अनंद अंनद।।
बरसत बिसद अमी के बादर, भींजत हैं कोई सन्त।
अगर बास जहाँ तत की नदिया, मानो धारा गंग।।
करि असनान मगन होइ बैठो, चढ़त सबद कै रंग।।
रोम रोम जा के अमृत भीना, पारस परसत अंग।।
सबद गह्यो जिव संसय नाहीं, साहिब भये तेरे संग।।

किन्तु इस अमृत की वर्षा उसी भाग्यशाली मनुष्य के हृदय में होती है, जो समय के पूर्ण सतगुरु की शरण-संगति ग्रहण कर उनके उपदेशानुसार अपनी सुरति को अन्तर्मुखी करता है और सद्गुरु शब्द के द्वारा उसे गगन में ठहराता है। सन्तों के वचन हैंः-

झरि लागै महलिया गगन घहराय।।
खन गरजै खन बिजुली चमकै,लहर उठै सोभा बरनि न जाय।।
अमर महल से अमृत बरसै, प्रेम अनंद ह्वै साध नहाय।।
खुली किवरिया मिटी अंधियरिया, धन सतगुरु जिन दिया है लखाय।।
धरमदास बिनवै कर जोरी, सतगुरु चरन में रहत समाय।।

बस, यही है सच्चे सुख, आनन्द और खुशी को प्राप्त करने का साधन है



कि मनुष्य पूर्ण सद्गुरु की शरण संगति ग्रहण कर उनके उपदेशानुसार परमात्मा के सच्चे प्रेम तथा नाम को हृदय में बसाए और अपनी सुरति को, जो बाह्य संसार में फैली हुई है और संसार के सामानों तथा इन्द्रियों के विषयरसों में आसक्त है, उसे उधर से मोड़कर अन्तर्मुख करे और सद्गुरु के बख्शे हुए सार शब्द के द्वारा उसे गगन में ठहराय।ऐसा करने से उसका सम्बन्ध आनन्दघन, सुखराशि परमात्मा के साथ जुड़ जायेगा। और उसकी सुरति उस लोक में विचरण करेगी, जो परमात्मा का अमर धाम है। और जहाँ हर समय अमृत बरसता रहता है। फलस्वरूप वह सदा आनन्द और सुख से भरपूर रहेगा। सत्पुरुषों के वचन हैंः-

सभ किछु घर महि बाहरि नाहीं।। बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही।।
जिनि अंतरि पाइआ सो अंतरि बाहरि सुहेला जीउ।।
झिमि झिमि बरसै अंमृत धारा।। मनु पीवै सुनि सबदु बीचारा।।
अनद बिनोद करे दिन राती सदा सदा हरि केला जीउ।।
जनम जनम का विछुड़िया मिलिआ।।साध कृपा ते सूका हरिआ।।
सुमति पाए नामु धिआए गुरमुखि होए मेला जीउ।।
जल तरंग जिउ जलहि समाइआ। तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ।।
कहु नानक भ्रम कटे किवाड़ा बहुड़ि न होई ऐ जउला जीउ।।

अर्थः-"सब कुछ घर में है अर्थात् सुख का स्रोत मनुष्य के अपने घट में है, बाह्य संसार में कहीं नहीं है। जो सुख आनन्द को बाहर ढूँढते फिरते हैं, वे भ्रम और भुलेखे का शिकार हैं। जो सौभाग्यशाली जीव सद्गुरु की कृपा से अपने अन्दर सुख के भण्डार को प्राप्त कर लेते हैं,वे अन्दर बाहर से सुखी हो जाते हैंअर्थात् बाह्य संसार के सुख भी उन्हें प्राप्त होते

होते हैं और मानसिक सुख आनन्द की भी उन्हें उपलब्धि हो जाती है।''

''गगन मंडल से नाम रूपी अमृत की धारा रिमझिम बरस रही है, परन्तु उसी मनुष्य का मन इस अमृत का पान कर सकता है जो सद्गुरु का शब्द श्रवण करता और उस पर विचार करता है अर्थात् पल पल सद्गुरु शब्द के साथ अपनी सुरति जोड़े रखता है, फलस्वरूप वह हर समय आत्मिक आनन्द का अनुभव करता है और सदा परमात्मा के मिलन का सुख प्राप्त करता है।''

''जन्म जन्मान्तर सेअपने अंशी परमात्मा से बिछुड़े हुये जीव का परमात्मा के संग जब मिलाप हो जाता है, तो जिस प्रकार वर्षा होने से गर्मी की तपस से मुरझाये पेड़-पौधे हरे-भरे हो जाते हैं, उसी प्रकार परमात्मा के मिलन तथाअमृत वर्षा का पान करने से जीव का मन भी हरा-भरा हो जाता है। किन्तु परमात्मा से मिलन तभी होता है जब मनुष्य गुरुमुख बनकर सुमति धारण कर नाम का सुमिरण करता है।''

''जैसे जल की तरंग जल में समा जाती है, वैसे ही गुरुमुख की सुरति परमात्मा के साथ मिली रहती है। सत्पुरुष फरमाते हैं कि भ्रमरूपी किवाड़, जिनके अन्दर जीव बन्द पड़ा रहता है, सद्गुरु की कृपा से कट जाते हैं, जिससे उसकी सुरति सदा परमात्मा के साथ युक्त रहती है, परमात्मा से उसका कभी वियोग नहीं होता।''

धन्य हैं वे गुरुमुख आत्मायें, जो पूर्ण सद्गुरु की शरण ग्रहण कर उनके उपदेशानुसार चित्त में परमात्मा का प्रेम बसा कर सुरति को अन्तर्मुख करके नामरूप अमृत का पान कर रहीं हैं। ऐसी सौभाग्यशाली आत्माओं के लिये ही वास्तव में श्रावण मास सुहावना एवं सुखदायी है।



सूखे हरे किये क्षण माहिं। अमृत दृष्टि सींच जीवाहीं।।

अपनी अमृतमयी वृष्टि करके सूखे हुये पौधों को हरा भरा करना महापुरुषों का सहज स्वभाव और उनका प्रभाव होता है बादलों की तरह अपनी विभुतियों को निःस्वार्थ ही निरन्तर जीवों पर बरसाया करते हैं। संसार के दुःखी जीवों को सुखी बनाने के लिये जीवों की बिगड़ी दशा सुधारने के लिये उनका शुभागमन होता है यही उनका मिशन होता है। सन्त महापुरुषों की शुभ संगति, उनके शुभ मिलन की महिमा का वर्णन करते हुए सतपुरुष श्री पंचम पादशाही जी महाराज अपनी पवित्र वाणी में कथन करते हैं कि:-

मेरे माधो साध संगति मिले सो तरिया।
गुरु प्रसादि परमपद पाइआ,सूखे काष्ठ हरिया।।

सन्त महापुरुषों की संगति, उनके सामिप्य और सानिध्य से श्री चरणों में बैठक प्राप्त हो जाने से जीव अनायास ही भवसागर से पार हो जाता है। सतगुरु की दया व कृपा से जीव को परमपद की प्राप्ति हो जाती है। सूखे काष्ठ हरिया। जैसे सूखे हुए पौधों पर वृष्टि हो जाने से वे फिर हरे भरे हो जाते हैं।

महापुरुष संसार रूपी बाग के बागवां बनकर आते हैं जिस प्रकार किसी बाग या बगीचे में फलों व फूलों के पौधों के साथ साथ घास फूस कँटीली झाड़ियां स्वतः ही उग आती हैं। पौधों को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़े मकौड़े दीमक इत्यादि अपने आप पैदा हो जाते हैं या पतझड़ के आ जाने पर बाग बेरोनक सा होने लगता है तो माली सर्वप्रथम अपने आप उगी हुई घास को, कंटीली झाड़ियों को उखाड़ फैंकता है।

दवाई इत्यादि छिड़क कर कीड़े मकोंड़ों व दीमक से पौधों की रक्षा करता है। समय समय पर खाद पानी की व्यवस्था करता है जिस से बाग में बसन्त बहार सी आने लगती है बाग हरा भरा हो जाता है विश्व के उद्यान के मालियों(महापुरुषों) का भी यही लक्ष्य होता है। जीव जब अपना आतमिक मार्क छोड़कर केवल शरीर के सुख आराम को ही अपने जीवन का ध्येय समझने लगता है जिससे भक्ति,त्याग,वैराग्य, आदि के मार्ग से भटक कर मोह ममता माया आशा तृष्णा के जाल में फँसकर दुःखी और परेशान हो जाते हैं तब महापुरुष अपनी दया दृष्टि करके सबसे पहले अपने श्री चरणों की सेवा बख्शकर जीव के अन्दर से माया ममता मोह आशा तृष्णा की कंटीली झाड़ियों को उखाड़ फैकते हैं। प्रभु नाम के रसायन छिड़का कर जीवों के अन्दर पैदा होने वाले काम क्रोध आदि दीमकों का नाश करते हैं अपने पावन श्री दर्शन व श्री चरण कमलों के प्यार के अमृत जल से सींचते हैं। जिससे जीवन में (गुरुमुखों प्रेमियों के जीवन में) बसन्त बहार सी आ जाती है। उनका रोम रोम प्रफुल्लित हो उठता है।


| | |
|---|---|
| नव वर्ष | 1 |
| दीपावली | 4 |
| शुभजन्म दिवस | 8 |
| राज्यतिलक (1) | 12 |
| राज्यतिलक (2) | 18 |
| अवतार | 26 |
| जन्माष्टमी | 30 |
| शुभ भण्डारा(1) | 34 |
| मकर सन्क्रान्ति (1) | 39 |
| मकर सन्क्रान्ति (2) | 43 |
| मकर सन्क्रान्ति (3) | 46 |
| श्री व्यास पूजा | 51 |
| रक्षा बन्धन | 60 |
| लोहड़ी | 66 |

सन्क्रान्ति

| | |
|---|---|
| मकर सन्क्रान्ति | 69 |
| फाल्गुणि सन्क्रान्ति | 72 |
| चैत सन्क्रान्ति | 80 |
| बैसाख सन्क्रान्ति | 82 |
| ज्येष्ठ संन्क्रान्ति | 91 |
| आषाढ़ सन्क्रन्ति | 99 |
| श्रावण सन्क्रान्ति | 102 |